ISSN 2815-8326

हिंदी त्रैमासिक

पहचान

देश से हम, हमसे देश

वर्ष: 5, अंक: 1, जुलाई- सितंबर 2026, पृष्ठ संख्या: 32

प्रधान संपादक : प्रीता व्यास

आवरण चित्र: मोहम्मद अहसन

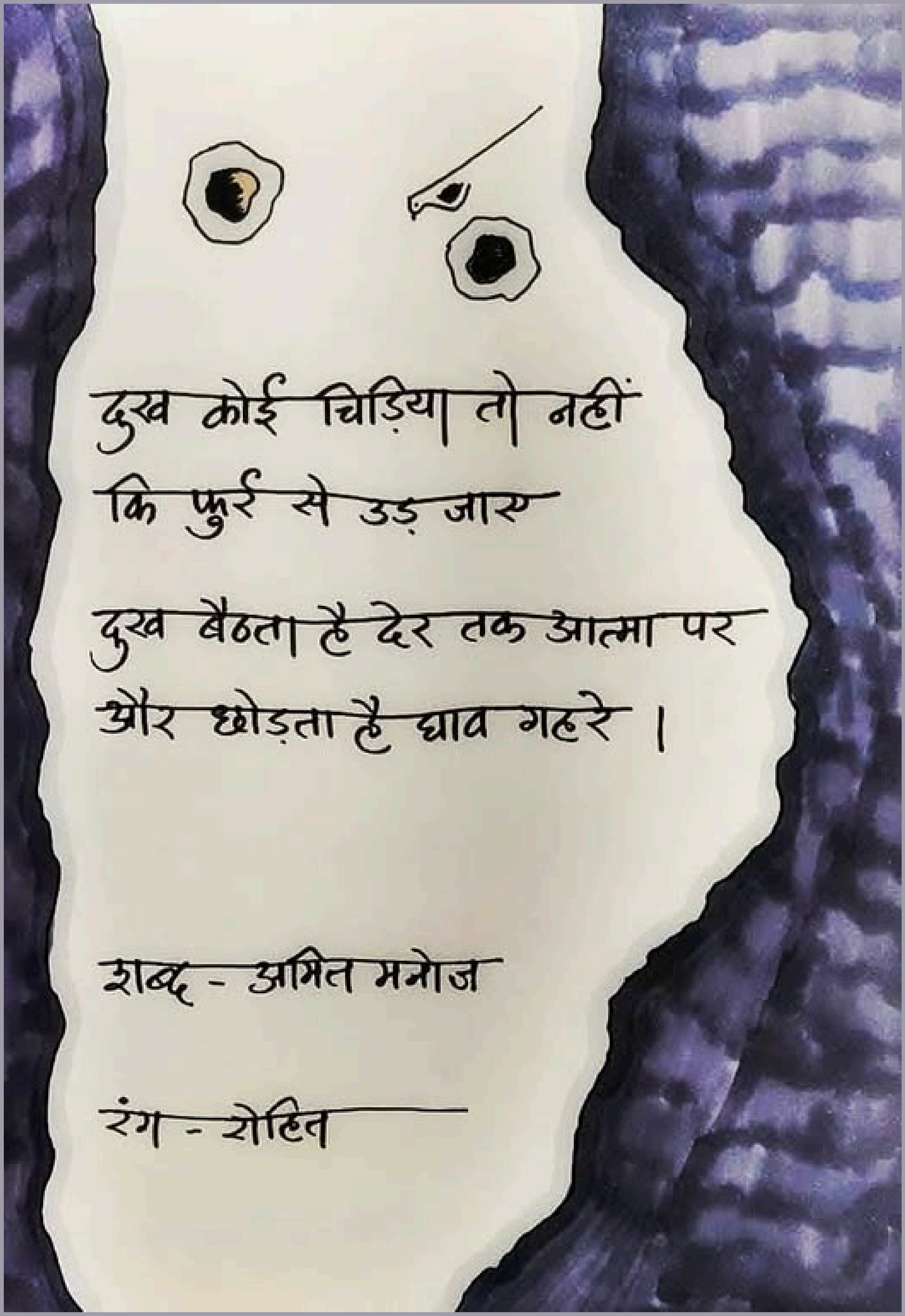
दुख कोई चिड़िया तो नहीं
कि फुर्र से उड़ जाए
दुख बैठता है देर तक आत्मा पर
और छोड़ता है घाव गहरे ।
शब्द - अमित मनोज
रंग - रोहित

हिंदी त्रैमासिक
पहचान
देश से हम, हमसे देश

संस्थापक/ प्रधान संपादक
प्रीता व्यास

सलाहकार संपादक
रोहित कृष्ण नंदन

ले आउट / ग्राफ़िक्स
प्रिया भारद्वाज

कवर पेज
मोहम्मद अहसान

प्रकाशक
पहचान

आकलैंड, न्यूज़ीलैंड

editor@pehachaan.com

डिस्क्लेमर

पत्रिका में प्रकाशित लेख, रचनाएं, साक्षात्कार लेखकों के निजी विचार हैं, उनसे प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं. रचनाओं की मौलिकता के लिए लेखक स्वयं ज़िम्मेवार है. कुछ चित्र और लेखों में प्रयुक्त कुछ आंकड़े इंटरनेट वेबसाइट से संकलित किए गए हो सकते हैं.

दो शब्द

"दिवस जात नहिं लागत बारा" यानी समय बीतते देर नहीं लगती. देखते ही देखते एक साल और पूरा हो गया. "पहचान" इस अंक के साथ अपने पांचवें वर्ष में प्रवेश कर रही है. सांस्कृतिक मूल्यों के ह्रास के इस दौर में एक अच्छी साहित्यिक पत्रिका का जीवित रह पाना, दीर्घायु हो पाना सिर्फ संपादक की ज़िद और जूनून के सहारे संभव नहीं जब तक कि पाठकों का, रचनाकारों का सक्रिय सहयोग ना मिले. तो अपनी बात धन्यवाद से ही आरंभ करती हूं.

हम एक ऐसे दौर में हैं जहां सम्पूर्ण विश्व को शान्ति की आवश्यकता है. युद्ध ने मानव त्रासदी के अतिरिक्त और भी कई तरह के संकट खड़े कर दिए हैं. अंतर्राष्ट्रीय नियमों का, सीमाओं का, स्वतंत्रताओं का सम्मान होना चाहिए। अगस्त भारत के लिए अतिरिक्त महत्व का मास है - स्वतंत्रता दिवस है सभी को शुभकामनाएं.

बहुत सारे अंतर्राष्ट्रीय दिवस आ रहे हैं जिनमें वर्ल्ड लंग कैंसर दिवस भी शामिल है. दुनिया भर में ये मृत्यु के कारणों में नंबर दो पर है और एक अनुमान है की सन 2050 तक इसके केसेज़ 77% बढ़ जाएंगे. लोग ये मान कर निश्चिन्त होते हैं कि इसका खतरा तो उनको होता है जो स्मोकिंग करते हैं लेकिन दुर्भाग्य से ये उनको भी हो जाता है जिनने जीवन में कभी धूम्रपान नहीं किया और ऐसे केसेज़ 15 -20 % होते हैं. तो कहां से नुक्सान पहुंचता है इनके फेंफड़ों को?
दोषी है वो हवा जिसमे हम सांस लेते हैं. हवा का भी क्या कुसूर, हमने ही लापरवाहियां कीं, पर्यावरण खुद ज़हरीला बना डाला हमने. कारखानों का धुंवां, वाहनों का धुंवां, कंक्रीट के जंगलों का उगते जाना और पेड़- पौधों का हरियाली का कम होते जाना हमें ऐसे कठिन समय तक ले आया है. अब इस समस्या का कोई क्विक फिक्स तो है नहीं लेकिन अब भी हम अगर जाग जाएं और ज़िम्मेदारी के साथ हर नागरिक अपने हिस्से का कुछ काम रोज़ पर्यावरण संरक्षण की दिशा में करता चले तो संभवतः स्थितियां जल्द ही नियंत्रण से बाहर ना हो सकें.

अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखें, अपने पर्यावरण का ध्यान रखें और अपनी इस "पहचान" को इसी तरह अपना साथ, सहयोग और आशीर्वाद देते रहें. यही मेरा बल है. जुड़िये और जुड़े रहिये.

प्रीता व्यास

इस अंक में ...

पाठकीय प्रतिक्रियाएं 5

आलेख

खेती और पर्यावरण के लिए क्यों जरूरी है दीमक?(पंकज चतुर्वेदी) 6 - 10

भाषा का अनाथालय और अदृश्य वध (जयप्रकाश मानस) 11 - 12

मराठी दलित कविता और मानवाधिकार (डॉ. शिराजोदीन) 13 -16

पितृ देव (अरुण कुमार उपाध्याय) 17

ब्रह्मांड का सबसे उन्नत सुपर ह्यूमन (मनीष शुक्ल) 18 - 20

व्यंग्य

मेहनत का शोक-संदेश और जुगाड़ का विजय-जुलूस (प्रो. आर. के. जैन 'अरिजीत') 21 - 22

ग़ज़ल

प्रवीन राय 23

सुभाष पाठक 'ज़िया' 24

अजय अज्ञात 25

विकास राणा फ़िक्र 26

गीत

सत्येंद्र सेंगर 27

बालकवि बैरागी 28

कविता

आतम - ज्ञान पद (राम नारायण मीणा हलधर) 29

स्वस्ति पाठ (माया मृग) 29

बाल गीत - विनीता गुप्ता 30

पुस्तक समीक्षा - भाषा बोल न जानहिं "कवीन्द्र केशव" 31

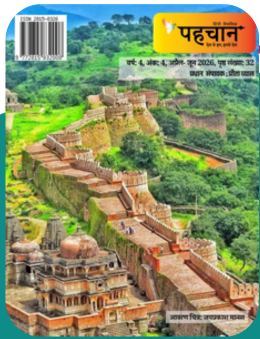

पाठकीय प्रतिक्रियाएं

आकलैंड (न्यूज़ीलैंड) से माननीय प्रीता जी के संपादन में प्रकाशित 'पहचान' त्रैमासिकी की वेबसाइट एवं पत्रिकाएं पढ़ने का सौभाग्य मिला. आपका सामग्री चयन बहुत अच्छा है. पत्रिका और वेबसाइट दोनों का आरूप मन मोह लेता है. इस आयोजन के लिए आपको हार्दिक बधाइयां और शुभकामनाएं.

- सुनीता जैन, भारत

पत्रिका सराहनीय है. चित्र, सामग्री, सभी श्रेष्ठ. ये तो और भी सुखद है कि इतनी अच्छी हिंदी की पत्रिका हिन्दुस्तान से नहीं विदेश से निकल रही है. आपकी पत्रिका से दुहरी आस जुड़ गई है. पहली ये कि इसमें अपने देश की बातें भरपूर मिलेंगीं और दूसरी ये कि इसमें विदेशों की विशेषताएं, चर्चाएं, वहां के सुख-दुःख का लेखा-जोखा भी मिलता रहेगा. सैल्यूट है आपको प्रीता मैम.

- गोविंद प्रसाद अशांत, भारत

ये इतनी स्तरीय सामग्री देती है कि हर बार अगले अंक की उत्कट प्रतीक्षा रहती है. साधुवाद.

- कृष्ण उपाध्याय, मलेशिया

कृपया एक लघु कथा विशेषांक भी निकालिये. आपके पहले अंक में दो लघुकथाएं शामिल थीं. मैं लघु कथाओं पर एक प्रोजेक्ट कर रही हूं. मुझे आपसे बड़ी उम्मीदें हैं.

- नीलिमा झा, भारत

मुझे ग़ज़लें पढ़ना बहुत अच्छा लगता है, मैं लिखती भी हूं लेकिन भेजने में संकोच कर रही हूं. आपके अंक में प्रकाशित सोमनाथ गुप्ता जी, मुमताज़ नाज़ां जी मोहन पूरी जी आदि सभी की गज़लें मुझे बहुत पसंद आईं. कृपया हर अंक में ग़ज़लें दिया कीजिये.

- सूफी रस्तोगी, आस्ट्रेलिया

ऑनलाइन पत्रिकाओं की भीड़ में "पहचान" की एक बिल्कुल अलग पहचान बन रही है. कहीं-कहीं इसे पढ़ते हुए धर्मयुग और साप्ताहिक हिंदुस्तान का युग याद आने लगता है. मुझे पत्रिका में शामिल सभी आलेख बहुत प्रभावी लगते हैं. इसी तरह उच्च स्तरीय सामग्री अपने पाठकों को देती रहें.

- नीलमणि बुधौलिया, भारत

ये हमारे मन की पहचान है
हमारी विशेषता को समेटे,
हमारे संस्कारों को सहेजे
ये "पहचान" हमारी शान है.

- संगीता पटेल, न्यूज़ीलैंड

विदेश से हिंदी की इतनी अच्छी पत्रिका प्रकाशित हो रही है, बहुत ही सुखद लगा. विचारोत्तेजक संपादकीय से लेकर निहित सारी सामग्री स्तरीय है. मुझे लगता है थोड़ा प्रचार-प्रसार आवश्यक है. हिंदी की सेवा में आपका प्रयास स्तुत्य है. आपकी यात्रा निरंतर जारी रहे, शुभकामनाएं.

- डॉ. अखिलेश शर्मा, भारत

हिंदी में पढ़ना बहुत धीरे हो पाता है लेकिन मुझे पसंद है. मैंने स्कूल में हिंदी पढ़ना सीखा था. आपकी मैगज़ीन के लिए शुभकामनाएं. बहुत नई चीजें मिलती हैं जानने को. इंडिया तो वैसे भी मेरे सपनों का देश है, कौन जाने कब जाने का संयोग बने.

- रवीन मालाराव, फीजी

खेती और पर्यावरण के लिए क्यों जरूरी है दीमक?

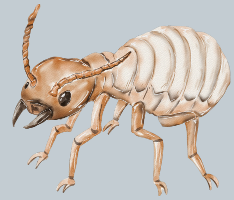

पंकज चतुर्वेदी

उड़ीसा का कश्मीर कहलाने वाले कंधमाल जिले के दरीनगबाड़ी के किसानों की चिंता है कि उनके खेत-जंगलों से “ऊई हुंका” गायब होते जा रहे हैं. भले ही पूरे देश के शहरी इलाकों में “ऊई हुंका” से मुक्ति के लिए बाकायदा एजेंसियां काम करती हैं लेकिन जंगल-खेत के लोग जानते हैं कि उनके गायब होने से न केवल

मिट्टी की उपजाऊ शक्ति प्रभावित होती है बल्कि यह प्राकृतिक भूमिगत जल पुनर्भरण प्रणाली को भी कमजोर कर सकता है, जो इस क्षेत्र में वनों के संरक्षण और सतत पर्यावरणीय प्रथाओं की तत्काल आवश्यकता को रेखांकित करता है. विदित हो ओडिशा के कंधमाल जिले में मुख्य रूप कांध जनजाति निवास करती है, जिसमें कुटिया कंधा और डोंगरिया कंधा तो विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह (पीवीटीजी) उप-समूह शामिल हैं.

इनका मुख्य व्यवसाय जैविक हल्दी की खेती और वनोपज संग्रहण है. वे जंगली उत्पादों, जैसे महुआ, शहद और इमली को इकट्ठा करके बेचते हैं और हल्दी की खेती के लिए प्रसिद्ध हैं. आदिवासी मानते हैं कि “ऊई हुंका” अर्थात दीमक की बांबियां लुप्त होने का अर्थ है कि धरती संकट में हैं. उड़ीसा के बालासोर में तो 30 फुट ऊंची बांबी पर बाकायदा मेला लगता है.

दीमक की बस्ती अर्थात ऊंचे- ऊंचे टीलों को जंगल के निवासी बहुत पवित्र मानते हैं. इन ‘उईहुंका’ को बेहतर पारिस्थितिकी का महत्वपूर्ण प्राकृतिक संकेतक माना जाता है. ये दरीनगबाड़ी के जंगलों से धीरे-धीरे गायब हो रहे हैं, जिससे स्थानीय लोग और पर्यावरणीय पर्यवेक्षक चिंतित हैं. प्रकृति और पारिस्थिक संतुलन से घनिष्ठ रूप से जुड़े ये टीले वन्य पारिस्थितियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं. हालांकि, जलवायु परिवर्तन और बड़े पैमाने पर वनों की कटाई ने उनकी संख्या में निरंतर कमी ला दी है. सनद रहे भारत सरकार की एक रिपोर्ट में ओडिसा को जलवायु परिवर्तन के लिए सर्वाधिक प्रभावित राज्य में गिना जाता है और यहां के लोग साल दर साल असमान वर्षा आवृति और ग्रीष्म, मानसून तथा शीतकाल के बीच असामान्य उतार-चढ़ाव झेल रहे हैं.

दरीनगबाड़ी को अपनी शुद्ध पर्यावरण और अनोखी भौगोलिक स्थिति के लिए जाना जाता है. पहाड़ों और घने जंगलों से घिरा यह क्षेत्र नदियों, धाराओं, विविध वनस्पतियों और सैकड़ों औषधीय पौधों की प्रजातियों से समृद्ध है. परंपरागत रूप से इन जंगलों में अनेक दीमक के टीले बने रहते थे, लेकिन हाल के वर्षों में वनों की कटाई और पर्यावरणीय दबाव के कारण उनकी उपस्थिति काफी घट गई है. दीमक की उपस्थित जंगल में जलवायु और मिट्टी के बेहतर स्वास्थ्य का प्रमाण तो है ही, इन्हें भूजल स्रोतों की पहचान करने में मदद के लिए भी पहचान जाता है. यह भूजल उपलब्धता का प्राकृतिक संकेतक है.

दीमक के टीले की संरचना प्रकृति के सबसे विस्मयकारी चमत्कारों में से एक है. इसे अगर कीटों द्वारा निर्मित वास्तुकला का शिखर कहा जाए, तो अतिशयोक्ति नहीं होगी. बाहर से मिट्टी का एक बेजान ढेर दिखने वाला यह टीला भीतर से एक आधुनिक महानगर की तरह व्यवस्थित और तकनीकी रूप से उन्नत होता है. एक टीले की बनावट ऐसी होती है कि बाहर चाहे कितनी भी चिलचिलाती धूप या ठंड हो, उसके भीतर का तापमान हमेशा स्थिर रहता है. दीमक अपनी बांबी को इस तरह डिजाइन करते हैं कि उसमें नैचुरल वेंटिलेशन या प्राकृतिक वायु-संचार होता रहे. टीले के भीतर कई महीन छेद और ऊर्ध्वाधर नलिकाएं होती हैं. गर्म हवा ऊपर की ओर उठकर टीले के ऊपरी छिद्रों से बाहर निकल जाती है, जबकि ठंडी और ताजी हवा नीचे के रास्तों से अंदर आती है. यह बिल्कुल वैसा ही है जैसे किसी आधुनिक इमारत में सेंट्रल एयर कंडीशनिंग काम करती है.

दीमक एक अत्यंत अनुशासित सामाजिक जीव हैं. इनके समाज में कार्य-विभाजन स्पष्ट होता है. रानी दीमक पूरे कुनबे की जननी होती है. रानी दीमक का आकार अन्य दीमकों की तुलना में बहुत बड़ा (कई सेंटीमीटर लंबा) हो सकता है. उसका मुख्य काम केवल अंडे देना है. एक स्वस्थ रानी एक दिन में 20,000 से 30,000 अंडे तक दे सकती है. रानी दीमक का जीवनकाल भी काफी लंबा होता है, जो 15 से 25 वर्षों तक हो सकता है. अक्सर आदिवासी इनका शिकार कर भून कर खाते हैं. वहीं राजा पूरी उम्र रानी के साथ रहता है और प्रजनन प्रक्रिया में सहयोग करता है. श्रमिक दीमक टीले की सबसे बड़ी आबादी होते हैं. इनका काम भोजन जुटाना, टीले की मरम्मत करना, रानी और बच्चों (लार्वा) की देखभाल करना और फंगस गार्डन की खेती करना है. फिर आते हैं सैनिक दीमक जिनके सिर बड़े और जबड़े मजबूत होते हैं. इनका एकमात्र काम टीले की रक्षा करना है, विशेषकर चींटियों जैसे दुश्मनों से.

टीले के सबसे सुरक्षित हिस्से में रानी का कक्ष होता है. इसके अलावा, टीले के भीतर फंगस गार्डन (कवक के बगीचे) होते हैं. दीमक चबाए हुए लकड़ी के बुरादे पर एक विशेष प्रकार की फंगस उगाते हैं. यह फंगस लकड़ी के जटिल रेशों को तोड़कर उसे सुपाच्य बनाती है, जिसे दीमक खाते हैं. यह एक तरह की इनडोर फार्मिंग है जिसे दीमक लाखों सालों से कर रहे हैं. दीमक अपने टीले बनाने के लिए मिट्टी, अपने मल और लार के मिश्रण का उपयोग करते हैं. सूखने के बाद यह मिश्रण कंक्रीट जैसा मजबूत हो जाता है, जिसे हाथ से तोड़ना भी मुश्किल होता है. यह मजबूती ही उन्हें बारिश और शिकारियों से सुरक्षा प्रदान करती है.

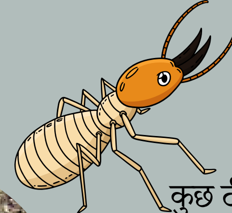

कुछ टीले पांच से छह फुट तक ऊंचे हो जाते हैं. दीमक का टीला केवल रहने की जगह नहीं, बल्कि एक जीवित मशीन है जो नमी, ऑक्सीजन और भोजन का संतुलन बनाए रखता है. पतझड़ के बाद दीमक तेजी से पत्ते खा कर कुछ ही दिनों में उसे उन्नत मिट्टी की ऊपरी परत में बदल देती हैं, जिस पर खेती कर आदिवासी अपना जीवन-यापन करते हैं.

हमारी दृष्टि में अक्सर दीमक का अस्तित्व केवल एक विनाशकारी कीट का है, जो चुपचाप लकड़ी के फर्नीचर या कृषि की खड़ी फसलों को चट कर जाता है. दीमक की तरह चाटना मुहावरा भी विनाश और क्षरण का ही प्रतीक बन चुका है. लेकिन विज्ञान और पारिस्थितिकी की गहरी परतों में झांकें तो तस्वीर इसके बिल्कुल उलट नजर आती है.

प्रकृति के विशाल कैनवास पर दीमक एक ऐसा मूक इंजीनियर है, जिसके बिना जंगलों का अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है और हमारी खेती की मिट्टी बेजान हो सकती है. जिसे हम विनाश समझते हैं, वह दरअसल पुनर्चक्रण की एक जटिल और अनिवार्य प्रक्रिया है.

दीमक का सबसे महत्वपूर्ण योगदान सेल्युलोज के पाचन में निहित है. पेड़-पौधों की मृत सूखी टहनियां और पत्तियां सेल्युलोज से बनी होती हैं, जो प्रकृति का सबसे कठिन जटिल पदार्थ है. यदि दुनिया में दीमक न होते, तो जंगल और खेत मृत लकड़ी और सूखे पत्तों के अंबार से पट जाते. दीमक के शरीर के भीतर मौजूद विशेष सूक्ष्मजीव इस जटिल पदार्थ को तोड़कर वापस मिट्टी में मिला देते हैं.

यह एक जादुई रूपांतरण है- मृत लकड़ी का उपजाऊ खाद में बदल जाना. इस प्रक्रिया के माध्यम से नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम जैसे महत्वपूर्ण पोषक तत्व वापस मिट्टी का हिस्सा बनते हैं, जिससे नए पौधों को जीवन मिलता है. इसी कारण दीमक को प्रकृति का सबसे बड़ा सफाईकर्मी और खाद उत्पादक माना जाता है.

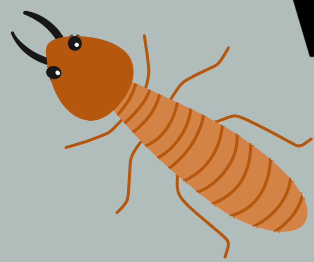

जलवायु परिवर्तन के इस दौर में दीमक का महत्व और भी बढ़ गया है. हाल के अंतरराष्ट्रीय शोधों, विशेषकर साइंस पत्रिका में प्रकाशित अध्ययनों ने यह चौंकाने वाला तथ्य सामने रखा है कि सूखे के समय दीमक पौधों के लिए जीवनरक्षक की भूमिका निभाते हैं. दीमक अपनी सुरंगों के माध्यम से जमीन की गहराई से नमी को ऊपर की परतों तक लाते हैं. यह नमी छोटे पौधों और वनस्पतियों को भीषण गर्मी में भी जीवित रखने में सहायक होती है. अक्सर देखा गया है कि जंगलों में दीमक की बांबियों के आसपास की वनस्पतियां अन्य स्थानों की तुलना में अधिक हरी-भरी और समृद्ध होती हैं. यह इस बात का प्रमाण है कि दीमक केवल जीव नहीं, बल्कि एक सूक्ष्म पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करते हैं.

खेती के संदर्भ में दीमक को लेकर जो चिंताएं व्यक्त की जाती हैं, वे अक्सर हमारी प्रबंधन की गलतियों का परिणाम होती हैं. वैज्ञानिक शोध बताते हैं कि दीमक की पहली पसंद मृत कार्बनिक पदार्थ होते हैं, जीवित फसल नहीं. जब किसान खेत से सारा कचरा, ठूंठ और पत्तियां साफ कर देता है और मिट्टी में कार्बनिक खाद (गोबर या खाद) की कमी हो जाती है, तब भूख से मजबूर होकर दीमक जीवित पौधों की जड़ों की ओर रुख करते हैं. यदि हम मिट्टी को पर्याप्त प्राकृतिक कचरा और मल्चिंग उपलब्ध कराएं, तो दीमक कभी दुश्मन नहीं बनेंगे, बल्कि मिट्टी को उपजाऊ बनाने वाले सबसे सस्ते और प्रभावी मजदूर साबित होंगे. वे मिट्टी के रासायनिक गुणों को सुधारते हैं और उसकी अम्लता व क्षारीयता को संतुलित करने में मदद करते हैं. शोध बताते हैं कि दीमक की बांबी के आसपास की मिट्टी में साधारण मिट्टी की तुलना में नाइट्रोजन की मात्रा 50% अधिक हो सकती है. दीमक का होना मिट्टी के जीवित होने का प्रमाण है. वे उस पुनर्जन्म की प्रक्रिया के वाहक हैं, जहां अंत ही नए जीवन का आरंभ बनता है.

आधुनिक कृषि और पर्यावरण संरक्षण में दीमक को खत्म करने की नहीं, बल्कि उन्हें समझने और उनके साथ सामंजस्य बिठाने की आवश्यकता है. यदि हम चाहते हैं कि हमारी धरती का उपजाऊपन बना रहे और जंगल अपनी प्राकृतिक लय में सांस लें, तो हमें इस नन्हे जीव की अनिवार्य उपयोगिता को स्वीकार करना ही होगा.

भारत में दीमक की बांबियां खत्म होने के प्रमुख कारण

1. रासायनिक कीटनाशकों और दीमकनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग. सबसे बड़ा कारण है कृषि रसायनों का अत्यधिक उपयोग. क्लोरोपाइरीफॉस, इमिडाक्लोप्रिड, फिप्रोनिल, क्लोरोपाइरीफॉस + साइपरमेथ्रिन जैसे मिश्रण. ये रसायन केवल फसल-नुकसान करने वाली दीमक ही नहीं बल्कि पूरी कॉलोनी (रानी, श्रमिक, सैनिक) को खत्म कर देते हैं. परिणाम: एक बार कॉलोनी नष्ट हुई तो बांबी दोबारा नहीं बनती, क्योंकि दीमक का पुनर्वास बेहद धीमा होता है.

2. खेती का मशीनीकरण और गहरी जुताई. पिछले 30–40 वर्षों में ट्रैक्टर, रोटावेटर, हैरो, सब-सॉइलर के उपयोग से मिट्टी की गहराई तक बनी दीमक सुरंगें टूट जाती हैं. बांबी की आंतरिक संरचना नष्ट हो जाती है. वैज्ञानिक अध्ययनों के अनुसार दीमक की कॉलोनी 10–15 साल में बनती है, लेकिन मशीन एक दिन में उसे नष्ट कर देती है.

3. बांबियों को "बेकार" समझकर तोड़ना ग्रामीण और वन क्षेत्रों में बांबियों को खेत के लिए बाधा या अंधविश्वास से जुड़ी चीज़ मानकर तोड़ा जाता है. कई राज्यों में सड़क, बिजली लाइन, खेत समतलीकरण के दौरान बांबियां बिना किसी पर्यावरण आकलन के हटा दी जाती हैं.

4. जंगलों का क्षरण और पत्तों की सफाई (Leaf litter removal). दीमक के जीवन के लिए आवश्यक है- सूखी पत्तियां, गिरी लकड़ी, मृत जैव पदार्थ लेकिन
जंगलों में ईंधन लकड़ी के लिए सफाई, पत्तों को जलाना, "साफ जंगल" की वन-नीति से दीमक का भोजन खत्म हो रहा है. बिना भोजन के कॉलोनी जीवित नहीं रह सकती.

5. जलवायु परिवर्तन और मिट्टी की नमी में गिरावट- दीमक को चाहिए, स्थिर तापमान, नियंत्रित नमी लेकिन अनियमित बारिश, लंबा सूखा, अत्यधिक गर्मी
से बांबियां सूख जाती हैं, अंडे और रानी मर जाती है, विशेषकर मध्य भारत, बुंदेलखंड, विदर्भ, तेलंगाना में यह प्रभाव साफ दिखता है.

6. जैविक कार्बन की कमी (Soil Organic Carbon) रासायनिक खेती के कारण- गोबर, कम्पोस्ट, फसल अवशेष मिट्टी में कम जा रहे हैं. जब मिट्टी में जैविक कार्बन 0.5% से नीचे जाता है, तो दीमक जीवित नहीं रह पाती, बांबी निर्माण रुक जाता है. भारत के कई खेतों में SOC अब 0.3–0.4% तक गिर चुका है.

7. वन्यजीवों और खाद्य-श्रृंखला का टूटना. दीमक बांबियां खत्म होने से- चींटीखोर (anteater), सरीसृप, कई पक्षी प्रजातियां भी घट रही हैं. यह पूरा पारिस्थितिक पतन (ecological collapse) का संकेत है.

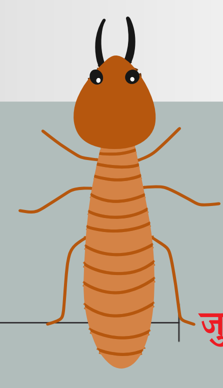

भाषा का अनाथालय और अदृश्य वध

जयप्रकाश मानस

एक बच्चा जब इस धरती पर आता है, तो वह केवल शरीर लेकर नहीं, एक सार्थक ध्वनि लेकर उपस्थित होता है. मां का पर्यायवाची सार्वजनिक शब्द है या हो या होगा - पर उसका नाद अलग होगा. निनाद भी साम्य नहीं.

उस ध्वनि में, एक निनाद में एक पूरा ब्रह्मांड होता है - राग, रंग और रस से लथपथ.

***

अगर हमारी संवेदनाओं में अभी भी थोड़ी जान बाक़ी है, तो हम उन ध्वनियों में कुछ बेहद परिचित शब्द भी पकड़ सकते हैं. शब्द हैं तो अपरिचित लेकिन अर्थ सर्वथा परिचित.

पर प्रश्न यह है कि उस बच्चे की भाषा में बात कौन करे? उसका अर्थ क्या है? क्या उसका कोई व्याकरण है?

बच्चे की भाषा की कोई लिपि नहीं होती है. आर्केस्ट्रा की ध्वनि होती है.

***

सच तो यह है कि किसी बच्चे की भाषा का प्रेमी कोई भी नहीं है. दुश्मन तब तो सभी होंगे - जब कोई भी प्रेमी न हों उसके!

न तो सत्ता को उस बच्चे की भाषा से मतलब है, न उस सत्य को जिसे हम किताबों में ढूढ़ते हैं, और न ही उस पाठशाला को जो घर के सबसे समीप है.

हम सब एक बच्चे की भाषा के 'पेशेवर हत्यारे' हैं. हम उसे एक ऐसी भाषा में दर्ज करते हैं, जो उसकी है ही नहीं. जैसे आत्मा हमारी हो - देह किसी की भी.

***

हम उस बच्चे को उस तराज़ू पर परखते हैं, जिसकी बांट (weights) उसकी ज़मीन के हैं ही नहीं.

***

अगर भाषा उसकी नहीं है, तो भविष्य भी उसका नहीं होगा. न कोई 'आगत' होगा, न कोई 'अनंत'.

हम बच्चे से पूछे बिना, उसे एक ऐसी पराई भाषा के 'अंधे कुएं' में धकेल रहे हैं, जो एक अपरिचित अतीत की धूल से भरी है.

यह केवल नादानी नहीं है, यह बौद्धिक अराजकता है.

***

यह एक सूक्ष्म और अनपढ़ी तानाशाही है.

जब भाषा पराई होती है, तो भले ही व्यक्ति न बदले, पर उसका व्यक्तित्व बदल जाता है.

वह अपनी ही जड़ों से 'डिस्कनेक्ट' (विच्छिन्न) हो जाता है. हमारी शिक्षा आज एक ऐसा क्रूर सौदा है जो देती कम है, छीनती ज़्यादा है- बच्चे से उसका बचपन, गांव से उसका भूगोल और कुनबे से उसकी स्मृतियां.

भाषा-पाठ का मतलब यह तो कतई नहीं था कि मां के जीवित रहते हुए शिशु को मौसी की गोद यानी 'अकादमिक अनाथालय' में फेंक दिया जाए.

***

हम सब निरंकुश हैं. हम अनपढ़ हैं या थे या होंगे यह भी स्वीकारते करते हुए कहने की छूट हो और यह झूठ न हो तो हम दमनकारी हैं क्योंकि हम एक छोटे से जीव की मौलिक आवाज़ को सभ्य बनाने के नाम पर कुचल रहे हैं.

***

याद रखिये, भाषा केवल शब्दों का समूह नहीं, आशा है. उस बच्चे की आशा, तुम्हारी आशा और हम सबकी साझा आशा.
यदि वह आशा ही पराई हो गई, तो फिर हमारे होने का अर्थ ही क्या बचेगा?

***

बच्चे की भाषा वह घर है जिसमें वह बिना दरवाज़ा खटखटाए अंदर-बाहर आता है, पर शिक्षा उसे उस घर से निकालकर एक 'नोटिस बोर्ड' बना देती है.
बच्चे की भाषा का मारा जाना सबसे ख़तरनाक है, क्योंकि यह एक हत्या है जिसके ख़िलाफ़ कोई एफआईआर दर्ज नहीं होती.

***

यह शिक्षा नहीं, बूझ सको तो एक औपनिवेशिक तंत्र है जो बच्चे के मुंह से उसकी अपनी आवाज़ छीनकर उसमें एक रिकॉर्डेड कैसेट फिट कर देता है.
बच्चा जब 'मां' कहता है, तो वह एक सृष्टि रचता है और जब हम उसे 'मदर' सिखाते हैं, तो हम उस सृष्टि का अनुवाद कर रहे होते हैं.

***

दुनिया में अनुवाद कभी भी 'मौलिक' की जगह नहीं ले सकता.

***

पढ़ने का मतलब है उन पानी के छींटों को पहचान लेना जो चूल्हे की आग पर गिरे तवे से उछलकर दीवार पर चिपक गए हैं, जैसे कोई वाक्यांश.
आप उन छींटों को नहीं पोंछते, आप उनसे पूछते हैं- तुम्हारी कहानी क्या है?

***

पढ़ने का मतलब है उस सिलाई मशीन की आवाज़ को सुन पाना जो रात के सन्नाटे में अपने ही टांकों को दोहराती है- टिक- टिक- टिक. हर टांका एक शब्द है.

और जो कपड़ा उसमें से निकल रहा है वह एक ऐसी पांडुलिपि है जिसे पहना जाएगा, पढ़ा नहीं. पढ़ना शुरू होता है उस क्षण से जब आप रास्ते में पड़े एक पत्थर को देखकर सोचते हैं कि यह यहां क्यों है? और फिर आप उस पत्थर की जगह अपने पांव रख देते हैं. अब आप पत्थर नहीं रहे. अब आप पत्थर की कहानी हो गए हैं. पढ़ना एक प्रवेश है, एक अदला-बदली है. आप किसी और की जगह खड़े होकर देखते हैं कि वहां से कैसा दिखता है.
कल शाम ट्रेन की खिड़की से एक बच्चे ने हाथ हिलाया, मैंने हाथ हिलाया. उसके बाद वह खिड़की का शीशा अपनी सांस से भाप बनाकर उंगली से कुछ लिखने लगा. मैं नहीं पढ़ पाया, पर मैंने पढ़ लिया.

पढ़ने का मतलब है उन अदृश्य अक्षरों को महसूस कर लेना जो हवा में लिखे गए और हवा में मिट गए. एक ऐसा पत्र जिसका कोई भेजने वाला नहीं, कोई पाने वाला नहीं, पर सब कुछ कह दिया.

जब आप बिना किताब के पढ़ रहे हों, जैसे अभी, इस कमरे में, मेज़ पर पड़ी चाय की प्याली के नीचे का गोल निशान. वह निशान एक पूरा वाक्य है. यह कहता है कि यहां कुछ रुका था, गर्म था, और अब नहीं है. पढ़ना, गायब होती चीज़ों को बचाने का तरीका है. आप उस निशान को छूते हैं, और वह फिर से गर्म हो जाता है.

मराठी दलित कविता और मानवाधिकार

डॉ. शिराजोदीन

मराठी दलित कविता भारतीय दलित साहित्य की एक क्रांतिकारी धारा है, जो जातीय भेदभाव, सामाजिक शोषण, धार्मिक पाखंड और आर्थिक असमानता के विरुद्ध विद्रोह का स्वर बनकर उभरी. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के विचारों से प्रेरित यह कविता केवल पीड़ा का चित्रण नहीं करती, अपितु समता, स्वतंत्रता, गरिमा और मानवाधिकारों की मांग को जीवन का आधार बनाती है. मराठी साहित्य के प्रसिद्ध साहित्यकार नामदेव ढसाल, दया पवार, अर्जुन डांगले, हिरा बनसोडे, ज्योति लांजेवार आदि की रचनाओं में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक अधिकारों की चर्चा प्रमुख रही है.

आधुनिक भारतीय साहित्य में दलित साहित्य एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप में उभरा है. विशेष रूप से मराठी दलित साहित्य ने 1960-70 के दशक में दलित पैंथर आंदोलन के माध्यम से एक नई क्रांतिकारी चेतना को जन्म दिया. यह साहित्य केवल व्यक्तिगत पीड़ा का वर्णन नहीं है, बल्कि सदियों से चले आ रहे वर्णव्यवस्था आधारित शोषण के विरुद्ध एक संगठित विद्रोह है. इस संदर्भ में विशेष रूप से मराठी दलित कविता उल्लेखनीय है, जो भारतीय दलित साहित्य की सबसे सशक्त धारा मानी जाती है.

मानवाधिकारों की अवधारणा संयुक्त राष्ट्र के सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणापत्र (1948) तथा भारतीय संविधान में निहित है. ये अधिकार जीवन, स्वतंत्रता, गरिमा, समानता और शोषण से मुक्ति जैसे मूल सिद्धांतों पर आधारित हैं. मराठी दलित कविता इन अधिकारों को कानूनी दस्तावेज़ों से आगे ले जाकर जीवन की वास्तविकता में स्थापित करने का प्रयास करती है. कवि जाति, धर्म, भाषा और संस्कृति के नाम पर होने वाले शोषण-अत्याचारों पर प्रकाश डालते हुए, एक नए मानवीय समाज की स्थापना करने प्रयास करते हैं.

मराठी दलित साहित्य का उदय आधुनिक भारत के दलित विमर्श की उस व्यापक सामाजिक-राजनीतिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग है, जो मुख्यतः डॉ. भीमराव आंबेडकर के नेतृत्व वाले आंदोलनों से प्रेरित हुआ. आंबेडकर ने हिंदू वर्णव्यवस्था की कठोरता के विरुद्ध संघर्ष को न केवल राजनीतिक पटल पर, बल्कि सांस्कृतिक और धार्मिक स्तर पर भी रूपांतरित किया, जिससे दलित समुदाय में एक गहन आत्मजागृति का संचार हुआ. इस प्रक्रिया में सन् 1927 का मनुस्मृति दहन एक प्रतीकात्मक विद्रोह के रूप में उभरा, जहां आंबेडकर ने ब्राह्मणवादी ग्रंथों की अस्पृश्यता-समर्थक मान्यताओं को सार्वजनिक रूप से अस्वीकार किया. इसी क्रम में महाड़ सत्याग्रह (1927) ने दलितों को सार्वजनिक जलाशयों तक पहुँच का अधिकार दिलाया, जबकि पूना पैक्ट (1932) ने राजनीतिक प्रतिनिधित्व के द्वार खोले. इन आंदोलनों ने दलित चेतना को जागृत कर सामाजिक न्याय की मांग को केन्द्र में स्थापित किया.

आंबेडकर का सन् 1956 में नागपुर में लाखों अनुयायियों समेत बौद्ध धम्म अपनाना इस प्रक्रिया का चरमोत्कर्ष था. इससे दलितों को हिंदू वर्णाश्रम की बेड़ियों से मुक्ति का वैकल्पिक दर्शन प्राप्त हुआ, जो जातिगत उत्पीड़न के विरुद्ध एक सांस्कृतिक क्रांति का प्रतीक बना. इस पृष्ठभूमि में सन् 1972 में दलित पैंथर आंदोलन की स्थापना मराठी दलित साहित्य के लिए मील का पत्थर सिद्ध हुआ. नामदेव ढसाल, राजा ढाले और जे. वी. पवार जैसे युवा कार्यकर्ताओं द्वारा प्रारंभ यह आंदोलन अमेरिकी ब्लैक पैंथर पार्टी (1966) से प्रेरित था, जो नस्लीय उत्पीड़न के विरुद्ध सशस्त्र प्रतिरोध की वकालत करता था. मराठी दलित पैंथर ने इसे भारतीय संदर्भ में अनुकूलित कर दलितों के आर्थिक शोषण, जातिगत हिंसा और सांस्कृतिक हाशिएकरण के विरुद्ध संघर्ष का आह्वान किया. इस आंदोलन ने साहित्य को मात्र अभिव्यक्ति का माध्यम न मानकर सामाजिक परिवर्तन का हथियार बनाया, जिससे दलित लेखन में विद्रोह की नई लहर उभरी.

दलित साहित्य की प्रारंभिक नींव बाबूराव बागुल के कहानी संग्रह जेव्हा मी जात चोरली हाय (1963) से पड़ी, जिसे मराठी दलित साहित्य की पहली महत्वपूर्ण रचना माना जाता है. इस संग्रह में बागुल ने दलित जीवन के यथार्थ, गरीबी, अस्पृश्यता और दैनिक संघर्ष को आत्मकथात्मक शैली में चित्रित किया, जो परंपरागत मराठी साहित्य की सौंदर्यपरकता से पूर्णतः भिन्न था. इसके बाद नामदेव ढसाल का काव्य संग्रह गोलपिठा (1972) ने दलित पैंथर आंदोलन को साहित्यिक आधार प्रदान किया. ढसाल की कविताएं मुंबई के गोलपिठा जैसे झुग्गी क्षेत्रों की गंदगी, वेश्यावृत्ति और दलित विद्रोह को कठोर, बोलचाल की भाषा में हैं, जिसमें भाषा की क्रांति स्पष्ट झलकती है.

दया पवार की आत्मकथा कोंडवाडा (1974) ने दलित अनुभव को व्यक्तिगत विमर्श के रूप में स्थापित किया, जहाँ लेखक ने अपनी अस्पृश्य जाति के रूप में भोगी अपमानजनक घटनाओं को यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत किया. इसी काल में अर्जुन डांगले द्वारा संपादित दलित कविता (1970) संकलन ने दलित कवियों की एक पीढ़ी को एकजुट किया, जिसमें शरद पाटिल, नारायण सूर्यवंशी आदि शामिल थे. इन रचनाओं ने मराठी साहित्य की परंपरागत भाषा, छंद और रूपकों को तोड़ते हुए एक नई विद्रोही शैली का सूत्रपात किया. दलित कविता में संस्कृतनिष्ठ मराठी के स्थान पर स्थानीय बोलियां, अश्लील शब्दावली और यथार्थवादी चित्रण प्रमुख हुए, जो ब्राह्मणवादी सौंदर्यबोध के विरुद्ध थे. उदाहरणस्वरूप, ढसाल की पंक्तियाँ- "तुम्ही माझ्या गंधीच्या डोळ्यांत / रक्ताच्या धुक्यांचा वर्षाव करा," दलित क्रोध की तीव्रता को प्रतिबिंबित करती हैं.

इस प्रकार, मराठी दलित साहित्य न केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति का माध्यम बना, अपितु सामाजिक परिवर्तन का प्रभावी साधन, जो आज भी भारतीय दलित विमर्श को प्रभावित करता है. जातीय भेदभाव एवं छुआछूत का विरोध डॉ. आंबेडकर के सामाजिक आंदोलनों का केंद्रीय तत्व रहा है. सन् 1927 के मनुस्मृति दहन ने ब्राह्मणवादी अस्पृश्यता को प्रतीकात्मक रूप से अस्वीकार किया, जबकि महाड़ सत्याग्रह ने दलितों को सार्वजनिक जलाशयों का अधिकार दिलाया. सन् 1956 का बौद्ध धम्म ग्रहण वर्णव्यवस्था से पूर्ण मुक्ति का प्रतीक बना, जिसने दलित विमर्श को सशक्त किया. इसी दिशा में मराठी दलित कविता सामाजिक समानता और मानवीय गरिमा के अधिकार को सर्वोच्च स्थान देती है. जातीय भेदभाव को ये कविताएं मानवता का सबसे बड़ा शत्रु मानती हैं. इस संदर्भ में हिरा बनसोडे की कविता प्रासंगिक है-

“विश्व में कहां नहीं, वैसा भेद यहां देखो
जन्म से ही वर्ण निश्चित होता
यह हिंद देश मेरा
ऊंचा पद मिले भट्टों को
अन्य सभी नीच बताएं
धर्म के नाम पर लड़े आपस में
यह हिंद देश मेरा
मनुष्य को पशु से हीन, इन्होंने यहां बनाया
क्या वही आर्यावर्त कहलाता
यह हिंद देश मेरा?”

हिंदू जातीय व्यवस्था में गुलामी एवं बेगारी दलित समुदायों पर थोपी गईं संरचनात्मक शोषण प्रथाएं रही हैं, जिन्हें मनुस्मृति जैसे ब्राह्मणवादी ग्रंथों ने विधिक मान्यता प्रदान की. जन्मजात शूद्र एवं अछूतों को बेगार मूल्यहीन, बाध्यकारी श्रम के रूप में उच्च वर्णों की सेवा के लिए विवश किया जाता था, जो आर्थिक दासता का प्रतीक था. यह प्रथा न केवल श्रम शोषण तक सीमित रही, अपितु सामाजिक अपमान एवं अमानवीकरण का साधन बनी, जहां दलितों को पशुओं से भी निम्न स्तर का माना गया. इस संदर्भ में हिरा बनसोडे गुलामी और बेगारी को चुनौती देते हुए कहती हैं-

"इस गुलामी को तोड़ो और बुरा काम छोड़ो
न सहो किसी का जुल्म न हो किसी के गुलाम
छोड़ दो नीच काम सारे."

भारतीय ग्रामीण समाज में छुआछूत जड़ता का प्रतीक है, जो हिंदू वर्ण व्यवस्था से उत्पन्न अस्पृश्यता प्रथा पर आधारित है. दलित बस्तियों को गांव के किनारे बसाया जाता था, जहां उन्हें कुओं, मंदिरों और सार्वजनिक स्थानों से वंचित रखा जाता. दैनिक जीवन में छुआछूत विवाह, भोजन, श्रम विभाजन और सामाजिक मेलजोल तक दिखती थी. डॉ. आंबेडकर ने इसे ब्राह्मणवादी मनुस्मृति की देन माना, जिसका विरोध महाड़ सत्याग्रह (1927) में हुआ. ग्रामीण दलितों को बेगारी, जातीय हिंसा और आर्थिक बहिष्कार का सामना करना पड़ता था. आजादी के बाद अनुच्छेद 17 ने इसे गैरकानूनी घोषित किया, किंतु ग्रामीण स्तर पर सामाजिक मान्यताएं बनी हुई हैं. दलित पैंथर आंदोलन ने साहित्यिक विद्रोह के माध्यम से इसे चुनौती दी. छुआछूत उन्मूलन हेतु शिक्षा, आर्थिक सशक्तिकरण और सामाजिक जागरण आवश्यक है. दया पवार अपनी कविता में गांव में की जाने छुआछूत के अनुभवों का यथार्थ चित्रण करते हुए लिखते हैं-

"ऐ महान देश कितने दिन चलेगा
तुम्हारा यह पंक्ति भेद
हम गांव के बाहर रहते हैं
इस में हमारा क्या दोष है?
देश के बाहर तो नहीं रहते?
हमारी पंक्ति भोज सदैव देर से बैठती है
वह भी कूड़े-करकट के ढेर पर."

शोषण और बेगारी का खंडन मराठी दलित साहित्य का मूल स्वर है, जो ब्राह्मणवादी वर्ण व्यवस्था द्वारा थोपी गई जातीय दासता के विरुद्ध आंबेडकरवादी विद्रोह को साहित्यिक रूप देता है. इस संदर्भ में नामदेव ढसाल की कविता बेगारी की अमानवीयता को इस प्रकार उजागर करती है-

"मैं बढ़ता रहा
रास्ते की गन्दगी पर
पांच पैसा दे दो
पांच गाली ले लो
कहता हुआ
दरगाह के रास्ते पर."

नामदेव ढसाल का गोलपीठा संग्रह (1972) की यह रचना दलित पैंथर आंदोलन की विद्रोही चेतना को बोलचाल भाषा में व्यक्त करती है. सरलता के साथ कठोर यथार्थ का चित्रण आंबेडकरवादी प्रतिरोध को साहित्यिक रूप देता है. बेगारी का यह चित्रण न केवल शोषण-विरोध है, अपितु मानवीय गरिमा की पुनर्स्थापना का संकल्प भी है. इसी क्रम में ज्योती लांजेवार की कविता प्रासंगिक है. वे लिखती हैं-

“आंखों में आसुओं का पावस भर कर
तपती धूप जैसे जिंदगी
दोपहर का सूरज ढलने तक
बीनी हुई कपास पोटली में संभाले
एक एक कतार दर-कतार
बाल-बच्चों का भविष्य संवारते
तुझे देखा मैंने मां”

ये पंक्तियाँ ‘मां’ कविता से ली गई हैं, जो दलित महिलाओं के आर्थिक संघर्ष को चित्रित करती हैं. आर्थिक दृष्टिकोण से, ये मां की जीवन-यात्रा को तपती धूप की तरह कष्टदायक दर्शाती हैं, जहां वह आंसू रोककर (भावनात्मक दमन) दिनभर कठोर श्रम करती है. ‘बीनी हुई कपास पोटली में संभाले’ -गरीबी और न्यूनतम संसाधनों का प्रतीक है, जहां मां सीमित मजदूरी से बच्चों का भविष्य संवारने की कोशिश करती है. दलित महिलाएं असंगठित क्षेत्र में बेगारी जैसी मजदूरी करती हैं, जहां शारीरिक श्रम के बदले न्यूनतम वेतन मिलता है. यह कविता आर्थिक अधिकारों की मांग करती है, जैसे उचित मजदूरी, सामाजिक सुरक्षा और शिक्षा, जो दलित समुदाय की आर्थिक मुक्ति के लिए आवश्यक हैं.

मराठी दलित कविताएं अमानवीयता के विरुद्ध एक प्रबल प्रतिरोध का रूप धारण करती हैं. अनेक अंबेडकरवादी व प्रगतिशील कवियों की कविताएं भारतीय दलित समाज की पीढ़ी-दर-पीढ़ी सहन की गई यातना, अभाव, तिरस्कार एवं सामाजिक बहिष्कार को अभिव्यक्त करती हैं, जो समानता, सम्मान एवं न्याय जैसे मौलिक मानवाधिकारों की प्राप्ति की अपील करती हैं. ये रचनाएं व्यक्तिगत कष्टों की अभिव्यक्ति के अतिरिक्त सामूहिक जागृति को प्रोत्साहित करती हैं. मराठी का दलित काव्य प्रमाणित करता है कि साहित्य मानवाधिकारों की रक्षा का एक प्रभावी माध्यम बन सकता है और हाशिए के समुदायों को सशक्तिकरण प्रदान करता है.

पितृ देव

अरुण कुमार उपाध्याय

पितरों के विषय में अर्धशिक्षित लोगों ने भ्रम फैलाया है कि इनका वेद में उल्लेख नहीं है. इनका पूर्ण उल्लेख वेद में ही है, कुछ का विस्तार से वर्णन पुराणों में है. पूर्ण ज्ञान के लिए वेद के साथ पुराण पढ़ना आवश्यक है, जो दोनों को पढ़ कर पूरा समझते हैं, उनको पौराणिक पोप, शवभक्षी आदि कह कर गाली देना आरंभ हुआ है. ऐसे अपशब्दों की परंपरा संस्कृत में नहीं थी. पितर ३ प्रकार के हैं-

(१) पर पितर- ये प्रसन्न होने के कारण नान्दीमुख हैं. बाकी २ अश्रुमुख हैं. ये अन्य पितरों से ऊपर स्थित हैं, अतः ये ऊर्ध्वमुख और अमूर्त हैं.

(२) मध्यम पितर- ये पार्वण पितर हैं, जिनका, मासिक, वार्षिक श्राद्ध होता है.

(३) अवर पितर-ये प्रेत पितर हैं जिनकी अभी मृत्यु हुई है और प्रेत शरीर बन रहा है.

नान्दीमुख पितर ३ प्रकार के है-(१) सोमसद्, (२) बर्हिषद्, (३) अग्निष्वात्त. इनके देव, ऋषि, लोक, जनक, जन्य, संख्या सारणी नीचे दी गयी है-

दिशा देव ऋषि पितर लोक जनक जन्य संख्या
उत्तर सोम पितृमान् सोमसद् सनातन साध्य वैराज -
अन्तर यम अङ्गिरस्वान् बर्हिषद् सोमपथ देवयोनि मारीच ८६,०००
दक्षिण अग्नि कव्यवाहन अग्निष्वात्त वैभ्राज देव पौलस्त्य ६४,०००

तीन में वर्गीकरण का आधार है-

(१) अग्नि = ऊष्ण, बाहर या ऊपर (उत्तर) की गति, (२) सोम = शीत, घनीभूत होना या नीचे (दक्षिण की गति), (३) यम = मध्यम, नियंत्रक. इनको भृगु, अङ्गिरा, अत्रि भी कहते हैं. भृगु आकर्षण करता है, अङ्गिरा विकिरण (अर्चि, अङ्गारा) करता है, अत्रि इन दोनों के समन्वय से सृष्टि करता है. संवत्सरात्मक प्रजापति के ऋत, सत्य- २ शरीर हैं. अग्नि ऋत जो उत्तरायण के ६ मास में बढ़ता है तथा दक्षिणायन में क्रमशः घटता है. दोनों भाग में ३-३ ऋतु हैं-उत्तरायण में वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, तथा दक्षिणायन में शरद्, हेमन्त, शिशिर। ऋतुओं से या उनके अनुरूप सृष्टि होती है, अतः ऋतु को भी पितर कहा गया है. दिवस, मास, वर्ष भेद से भी ३ ऋताग्नि पितर हैं.

(२) पार्वण पितर- ये नान्दीमुख से नीचे हैं. अतः ये अधोमुख और मूर्तिमान् हैं. इनके ४ भेद हैं-(१) सोमप, (२) हविर्भुक्, (३) आज्यप, (४) सुकाली.

सोमप- सोमपान करने वाले पितरों के २ भेद हैं- (१) वैराज, (२) काव्य. वैराज का निरूपण नान्दीमुख में हो चुका है. काव्य पितर ही पार्वण में आते हैं. ये कवि से उत्पन्न होते हैं, अतः काव्य हैं. इनका लोक ज्योतिर्भास हैं. हविर्भुक्- ये हवि का भोग करते हैं. ये अङ्गिरा से उत्पन्न होते हैं. इनका लोक मारीच (मरीचि अर्थात् सूर्य वायु का क्षेत्र) है. आज्यप- ये आज्य (घी) ग्रहण करते हैं. इनका लोक तेजस्वी है. सुकाली- ये वसिष्ठ से पैदा होते हैं अतः इनको वासिष्ठ कहा गया है. इनके मानस लोक हैं. सुकाली कोई द्रव्य नहीं ग्रहण करते हैं. ये चारों प्रत्येक वस्तु के पितर हैं. हर वस्तु तथा पितर का मनुष्यों की तरह ४ वर्णों में विभाजन किया गया है. पार्वण पितर पृथिवी, अन्तरिक्ष तथा द्युलोकमें रहते हैं, अतः इनके सहकारी देवता हैं- वसु, रुद्र, आदित्य. याज्ञवल्क्य ने इनको 'वसुरुद्रादितिसुताः पितरः श्राद्धदेवताः' कहा है.

(३) प्रेत मनुष्य पितर-मनुष्य पितरों का वर्णन वायु, ब्रह्म पुराण आदि में हैं. ब्रह्म पुराणमें इनकी संख्या ७ है- पिता, पितामह, प्रपितामह, वृद्धप्रपितामह, अतिवृद्धप्रपितामह, वृद्धातिवृद्धप्रपितामह आदि. इनमें पिता, पितामह, प्रपितामह को अश्रुमुख तथा उनसे पूर्व ३ को नान्दीमुख कहा गया है. विवाह आदि शुभ कार्यों में नान्दीमुख पितरों का श्राद्ध होता है. इनकी मृत्यु बहुत पहले हो चुकी है, अतः ये शोक भूल चुके हैं और प्रसन्न हो कर आशीर्वाद देते हैं. मार्कण्डेय पुराण में भी ऐसा ही वर्णन है. ये सभी सौम्य (सोम से उत्पन्न) पितर हैं तथा शरीर त्याग के बाद सोम मय चन्द्रलोक में जाते हैं-

ये वै के चास्माल्लोकात् प्रयान्ति चन्द्रमसमेव ते सर्वे गच्छन्ति (कौषीतकि ब्राह्मण, १६/५)

स्कन्द पुराण, नागर खण्ड में ४ अन्य पितरों के नाम हैं- रश्मिपा, उपहूताः, आयन्तुनः, स्वादुषदः. ये सौम्य पितरों के ही अन्य नाम हैं-

उपहूताः पितरो ये मघासु (तैत्तिरीय ब्राह्मण, २/१/१)

उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु॥ (वाज. यजु, १९/५७)

आयन्तु नः पितरः सोम्यासो अग्निश्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः (वाज. यजु, १९/५८)

ब्रह्मांड का सबसे उन्नत सुपर ह्यूमन

मनीष शुक्ल

क्या आपने कभी सोचा है कि जिसे हम मात्र 'वानर' समझकर पूजते हैं, वह असल में ब्रह्मांड का सबसे उन्नत सुपर ह्यूमन' (Super-human) हैं? त्रेतायुग में एक ऐसी प्रजाति अस्तित्व में थी, जिसकी तकनीक आज के 'क्वांटम फिजिक्स' (Quantum Physics) से भी कोसों आगे थी? जिसे दुनिया केवल एक 'पूंछ वाला वानर' समझती रही, वह असल में ऋग्वेद का प्रकांड विद्वान और अंतरिक्ष की दूरियों को पलक झपकते नापने वाला एक 'कॉस्मिक वारियर' (Cosmic Warrior) हैं. आइए, आज आस्था के चश्मे को उतारकर विज्ञान और शास्त्र के सूक्ष्मदर्शी (Microscope) से देखते हैं महाबली हनुमान के वास्तविक स्वरूप का वह सच, जो अब तक छिपा रहा.

हनुमान जी वास्तव में 'वानर' (Vanara) जाति के थे. शब्द विज्ञान के अनुसार 'वानर' का अर्थ केवल बंदर नहीं होता. इसका संधि विच्छेद है- 'वा' (अर्थात 'क्या') और 'नर' (अर्थात 'मनुष्य'). यह उस उन्नत प्रजाति के लिए संबोधन था जो शारीरिक रूप से वानरों जैसी शक्तिशाली थी, किंतु बुद्धि, भाषा (Language) और चेतना (Consciousness) में मनुष्यों से कहीं अधिक श्रेष्ठ थी. वे 'किन्नर' और 'गन्धर्व' की भांति एक विशिष्ट देव-योनि के सन्निकट थे.

जब ऋष्यमूक पर्वत पर हनुमान जी प्रथम बार प्रभु श्री राम से मिले, तो उन्होंने एक ब्राह्मण का वेश धरकर शास्त्र सम्मत संवाद किया. उनके व्याकरण (Grammar) और शुद्ध उच्चारण (Pronunciation) को सुनकर साक्षात विष्णु के अवतार श्री राम भी चकित रह गए. किष्किन्धा काण्ड (Kishkindha Kanda) में श्री राम लक्ष्मण से कहते हैं-

नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नासामवेदविदुषः शक्यमेवं प्रभाषितुम्॥

(जिसने ऋग्वेद की शिक्षा न ली हो, यजुर्वेद का अभ्यास न किया हो और सामवेद का ज्ञान न हो, वह इतनी परिष्कृत भाषा में संवाद (Communication) नहीं कर सकता.)

प्रभु श्री राम आगे कहते हैं-

नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम्।
बहु व्याहरतानेन न किंचिदपशब्दितम्॥

(निश्चय ही इन्होंने संपूर्ण व्याकरण (Grammar) का अनेक बार स्वाध्याय किया है, क्योंकि इतने लंबे संवाद में इनके मुख से एक भी अशुद्ध शब्द (Wrong word) नहीं निकला.)

यह सिद्ध करता है कि हनुमानजी 'वाचस्पति' थे, जिनका बौद्धिक (Intellectual) स्तर पशु जगत की कल्पना से परे था. आइए अब वैज्ञानिक विश्लेषण करते हैं. होमिनेड्स और क्वांटम भौतिकी (Scientific Angle) से समझते हैं.

जय श्री राम

जय श्री राम

मानव विकास (Evolution) के क्रम में 'होमो सेपियन्स' के साथ-साथ 'होमिनेड्स' (Hominids) की ऐसी प्रजातियां भी मौजूद थीं जो शारीरिक बल में मनुष्य से दस गुना शक्तिशाली थीं. हनुमान जी उसी उन्नत और दिव्य प्रजाति के प्रतिनिधि थे जिनके पास पूंछ (Tail) जैसे अवशेषी अंग थे, लेकिन मस्तिष्क की क्षमता असीमित थी.

हनुमान जी की 'अष्ट सिद्धियां' वास्तव में पदार्थ (Matter) और ऊर्जा (Energy) पर पूर्ण नियंत्रण हैं. 'अणिमा' (Anima) सिद्धि परमाणु स्तर पर संकुचित होने की क्षमता है, जबकि 'महिमा' (Mahima) ब्रह्मांडीय विस्तार का विज्ञान है. यह क्वांटम फिजिक्स के 'मास-डेंसिटी' (Mass Density) और 'स्पेस-टाइम' (Space-time) के सिद्धांतों को चुनौती देने वाली सर्वोच्च तकनीक है.

वज्र देह (Bio-Physical Strength): उनका शरीर 'वज्र' के समान था. उनकी कोशिकाओं (Cells) का घनत्व सामान्य जैविक ढांचे से भिन्न था, जो उन्हें वायु की गति (Supersonic speed) से उड़ने और गुरुत्वाकर्षण (Gravity) को बेअसर करने की शक्ति प्रदान करती थी.

ब्रह्मांड के सबसे बड़े योद्धा हनुमानजी केवल एक विद्वान नहीं, बल्कि रणक्षेत्र के वह काल हैं जिनके सामने मृत्यु भी थरथराती है. उनका व्यक्तित्व 'अतुलितबलधामं' है. लंका दहन से लेकर रावण की सभा तक, उनका पराक्रम किसी सेना का मोहताज नहीं था. वे स्वयं में एक 'वन मैन आर्मी' (One Man Army) थे. उनकी गर्जना मात्र से शत्रुओं के हृदय विदीर्ण हो जाते थे. ब्रह्मांड का कोई भी अस्त्र (Weapon), चाहे वह ब्रह्मास्त्र हो या इंद्र का वज्र, उनकी चेतना को परास्त नहीं कर सका. वे काल के भी नियंता हैं क्योंकि वे 'चिरंजीवी' हैं.

समुद्र लांघना उनकी शारीरिक शक्ति नहीं, बल्कि उनके संकल्प (Will power) की विजय थी. वे सौर मंडल (Solar system) को लांघकर सूर्य को ग्रसने की क्षमता रखते हैं, जो उन्हें एक 'कॉस्मिक वारियर' (Cosmic Warrior) बनाता है.

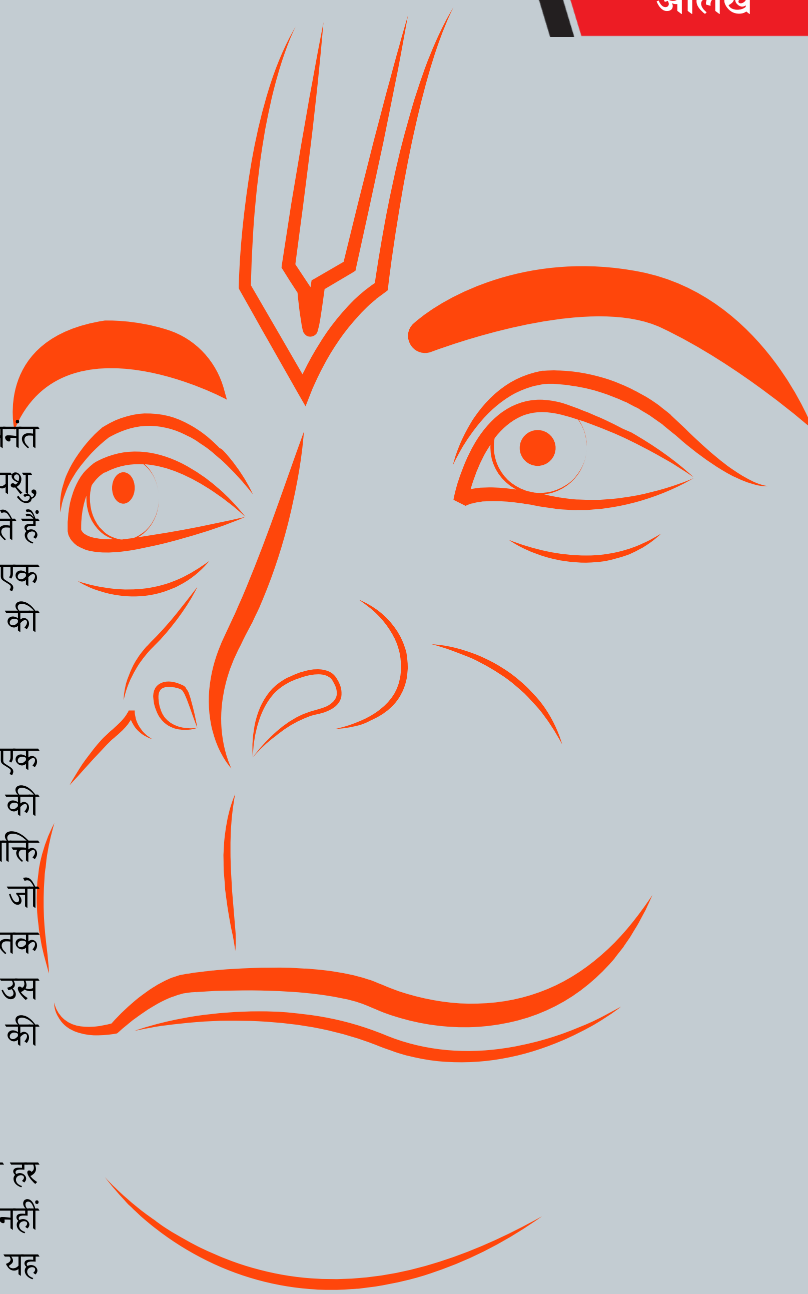

हनुमान जी का वानर स्वरूप एक 'दिव्य आवरण' है, जिसके भीतर अनंत ब्रह्मांडीय ज्ञान और अदम्य शक्ति का महासागर हिलोरें लेता है. वे पशु, मनुष्य और देवता के बीच का वह सेतु (Bridge) हैं, जो यह सिद्ध करते हैं कि यदि चेतना जागृत हो, तो शारीरिक सीमाएं अर्थहीन हो जाती हैं. वे एक 'सुपर-ह्यूमन' (Super-human) नहीं, बल्कि साक्षात 'ब्रह्म' की क्रियात्मक शक्ति हैं.

अंततः, हनुमान जी का 'वानर' स्वरूप उस विराट चेतना का केवल एक आवरण है, जिसे हमारी सीमित आंखें देख पाती हैं. वे पशुता से देवत्व की यात्रा के वह चरम बिंदु हैं, जहां पहुंचकर बुद्धि 'वेदांत' बन जाती है और शक्ति 'सेवा' में रूपांतरित हो जाती है. वे उस आदि-ऊर्जा के जीवंत प्रमाण हैं, जो सूर्य को निगलने का साहस भी रखती है और प्रभु के चरणों में मस्तक झुकाने की विनम्रता भी. वे अतीत की कथा नहीं, बल्कि भविष्य के उस 'सुपर-ह्यूमन' का ब्लूप्रिंट (Blueprint) हैं, जिसे विज्ञान आज खोजने की कोशिश कर रहा है.

जब तक इस ब्रह्मांड में प्राणों का संचार है, तब तक वायुपुत्र की गर्जना हर उस हृदय में गूँजती रहेगी, जो साहस और ज्ञान की खोज में है. वे 'वानर' नहीं थे, वे तो स्वयं 'ब्रह्म' की वह क्रियाशील शक्ति थे, जिसने धरा पर उतरकर यह सिद्ध किया कि यदि भीतर राम (परम चेतना) जागृत हों, तो एक पूंछ वाला जीव भी काल के कपाल पर विजय की पटकथा लिख सकता है.
"वे केवल वानर कुल के प्रतीक नहीं, बल्कि ब्रह्मांड के वह 'पार्टिकल' (Particle) हैं, जिनमें साक्षात परमात्मा की 'स्पीड' (Speed) और 'पावर' (Power) बसती है."

मेहनत का शोक-संदेश और जुगाड़ का विजय-जुलूस

प्रो. आर. के. जैन 'अरिजीत'

हमारे देश में यदि किसी खेल को आधिकारिक दर्जा मिलना चाहिए, तो वह है- सफलता का शॉर्टकट खोजने की कला. यह कला इतनी विकसित हो चुकी है कि ओलंपिक में शामिल हो जाए तो पदक पक्का है. इस खेल के खिलाड़ी हर गली-मोहल्ले में मिल जाते हैं और प्रशिक्षण बचपन से शुरू हो जाता है. बच्चे के जन्म के साथ ही माता-पिता भविष्य की ऐसी रूपरेखा बनाते हैं मानो कोई स्टार्ट-अप लॉन्च हो रहा हो, पर भीतर की इच्छा यही रहती है कि बेटा मेहनत की सीढ़ियां न गिने, सीधे लिफ्ट से टॉप फ्लोर पर उतरे. स्कूल में आदर्शवाद का भाषण मिलता है- “परिश्रम ही सफलता की कुंजी है” और शाम की ट्यूशन में वही कुंजी बदलकर “ये दस प्रश्न कर लो, पेपर यहीं से आएगा” हो जाती है. धीरे-धीरे बच्चे को समझ आ जाता है कि मेहनत पुराना वर्ज़न है, और शॉर्टकट उसका लेटेस्ट अपडेट.

शिक्षा व्यवस्था में प्रवेश करते ही यह खेल प्रोफेशनल लीग बन जाता है. विद्यार्थी ज्ञान से अधिक अंक बटोरने की रणनीति सीखता है. नोट्स ऐसे तैयार होते हैं जैसे सीमा पर रणनीति बन रही हो- कहां से प्रश्न आएगा, किसे छोड़ना है, किसे पकड़ना है. परीक्षा कक्ष में बैठा छात्र प्रश्नों को कम, संभावनाओं को ज़्यादा पढ़ता है, उत्तर से अधिक उसे अनुमान पर भरोसा होता है. वह सोचता है कि यदि जीवन भी ‘ऑब्जेक्टिव टाइप’ होता तो चार विकल्पों में से एक पर टिक लगाकर आगे बढ़ जाता. परिणाम घोषित होते ही तुलना का कुंभ मेला लग जाता है. अधिक अंक वाला “जीनियस” घोषित, कम अंक वाले को सांत्वना- थोड़ा और स्मार्ट बनो और यह स्मार्टनेस प्रायः ईमानदार परिश्रम से नहीं, चतुर घुमावदार रास्तों से होकर गुजरती है.

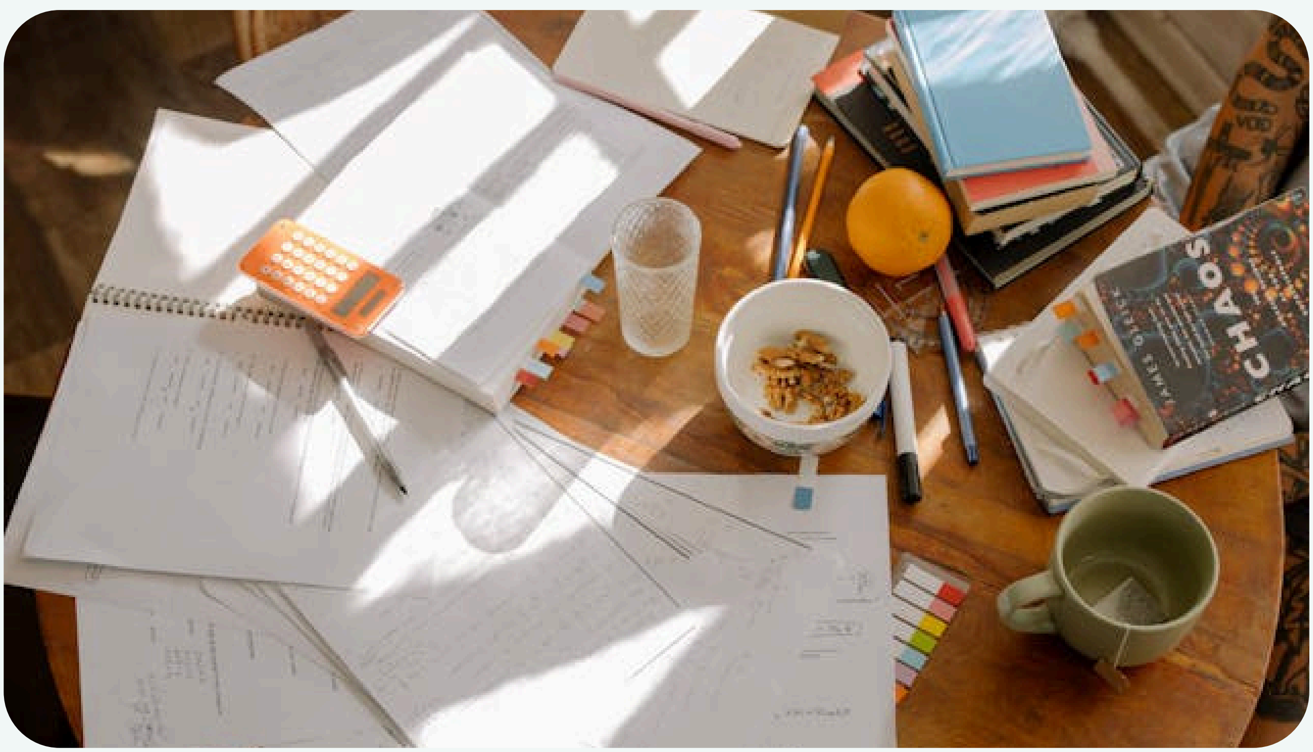

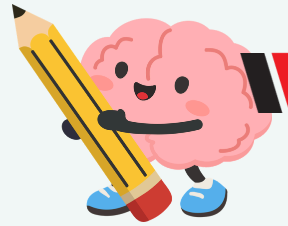

नौकरी की दुनिया में कदम रखते ही शॉर्टकट का यह राष्ट्रीय खेल कॉरपोरेट लीग में प्रवेश कर जाता है. बायोडाटा में अनुभव का मेकअप लगाया जाता है, इंटरव्यू में आत्मविश्वास का परफ्यूम छिड़का जाता है, और नेटवर्किंग को योग्यता का पर्याय मान लिया जाता है. मेहनत करने वाला व्यक्ति धीरे-धीरे समझता है कि दौड़ सिर्फ ट्रैक पर नहीं, ट्रैक के बाहर वीआईपी लेन में भी चल रही है. प्रमोशन की सूची आते ही कार्यालय में दर्शनशास्त्र जन्म लेता है- "मेहनत जरूरी है, पर पहचान उससे भी जरूरी." जो आगे निकल जाए, वह दूरदर्शी, जो पीछे रह जाए, उसे समझाया जाता है कि धैर्य महान गुण है. इस पूरे नाटक में कर्म शब्द मंच पर तो रहता है, पर परदे के पीछे जुगाड़ की माइक-टेस्ट लगातार चलती रहती है.

राजनीति और सार्वजनिक जीवन में यह कला और भी रोशन हो उठती है. भाषणों में आदर्शों की आतिशबाजी होती है, पर ज़मीन पर समीकरणों की गणित चलती है. जनता भी कम चतुर नहीं, वह जानती है कि वादे चुनावी मौसम की फसल हैं. फिर भी हर बार उम्मीद की खाद डाल देती है कि शायद इस बार चमत्कार का पौधा उग आए. सोशल मीडिया ने तो इस खेल को एक्सप्रेस सेवा दे दी है. यहां विचारों से अधिक दृश्य चलते हैं, और सच्चाई से अधिक ट्रेंड. किसी मुद्दे पर गहराई से सोचने की बजाय हम तुरंत प्रतिक्रिया देकर आगे बढ़ जाते हैं. मानो समाज भी ऐसी परीक्षा हो जहां विस्तृत उत्तर लिखना समय की बर्बादी है और सही विकल्प पर तुरंत क्लिक करना ही बुद्धिमानी की अंतिम परिभाषा.

शॉर्टकट का आकर्षण इसलिए बढ़ता है क्योंकि हमें परिणाम जल्दी चाहिए. परीक्षा से एक रात पहले पूरी किताब को श्रद्धांजलि देकर "लीक हुए प्रश्न" की आरती उतारने वाला छात्र किसी तरह किनारा तो कर लेता है, पर अगली कक्षा में वही नींव उसके पैरों को डगमगाती है. सड़क पर ट्रैफिक सिग्नल तोड़कर आगे निकलने वाला चालक पांच मिनट बचा लेता है, पर उसी मानसिकता से बना शहर रोज़ घंटों जाम में फंसता है. निर्माण में घटिया सामग्री लगाकर पुल समय पर खड़ा तो हो जाता है, पर एक दरार पूरे विश्वास को गिरा देती है. खिलाड़ी यदि प्रतिबंधित दवाओं का सहारा लेकर पदक जीत भी ले, तो एक जांच रिपोर्ट उसकी चमक को ऐसे उतार देती है जैसे बारिश में सस्ता रंग. शॉर्टकट का हर लाभ उधार की रकम है- समय पर नहीं तो बदनाम होकर लौटती है और ब्याज में सबसे पहले विश्वसनीयता गिरवी रख जाती है.

अंततः प्रश्न समाज की लंबी-चौड़ी बहस का नहीं, आईने के सामने खड़े एक अकेले व्यक्ति का है. क्या हम सचमुच तेज़ जीत चाहते हैं, या गहरी जीत? किसान बीज बोकर रोज़ खेत खोदकर नहीं देखता कि अंकुर निकला या नहीं, वह पानी देता है, धूप-बारिश सहता है और प्रकृति पर भरोसा रखता है. कारीगर महीनों तक एक प्रतिमा गढ़ता है, तब कहीं जाकर उसमें जान आती है. वैज्ञानिक असंख्य असफल प्रयोगों के बाद एक सूत्र खोजता है, और वही खोज पीढ़ियों का भविष्य बदल देती है. पर हम हैं कि कच्चे आम को रंग चढ़ाकर आमरस की उम्मीद करते हैं. सच यह है कि अधपका फल पेट तो भर सकता है, स्वाद नहीं. इसलिए असली निर्णय यही है- क्षणिक चमक चुननी है या दीर्घकालिक उजाला जो हर मोड़ पर आसान बहने की जगह कठिन ईमानदारी चुनता है, वही ऐसा चरित्र गढ़ता है जिसे न परीक्षा डिगा पाती है, न प्रलोभन खरीद पाता है. लंबा रास्ता थकाता ज़रूर है, पर वही जीवन को ऊंचाई के साथ वह गहराई देता है, जहां गिरने का डर कम और टिके रहने का आत्मविश्वास ज़्यादा होता है.

प्रवीन राय

(1)
उलझनों से अभी निकाल हमें.
ज़िंदगी, ज़िंदगी संभाल हमें.
अब कोई हाल-चाल पूछे मत,
तंग करते हैं यह सवाल हमें.
चाह कर भी समझ नहीं आई,
ज़िंदगी तेरी कोई चाल हमें.
ज़िंदगी हाथ जोड़ते हैं हम,
मत किसी कश्मकश में डाल हमें.
कुछ न कुछ तो निकल ही आएगा,
तू अभी ठीक से खंगाल हमें.
आंसुओं की नदी निकल आती,
वक़्त देता न गर रुमाल हमें.
किन ख़यालों में खोए-खोए थे,
अब तो ये भी नहीं ख़याल हमें.

(2)
ये जो ऊंची उड़ान वाले हैं.
ध्यान रखिये गुमान वाले हैं.
क्या ग़ज़ब है कि लाश माज़ी की,
ढो रहे वर्तमान वाले हैं.
हम को सुनने में ज़ल्द-बाज़ी क्यूं ,
आप तो इत्मिनान वाले हैं.
साथ तन्हाइयों का है वरना,
रास्ते तक ढ़लान वाले हैं.
ज़ुल्म होगा तो चीख़ गूंजेगी,
देखिए, हम ज़बान वाले हैं.
जिससे आते 'कबीर-तुलसी' हों,
हम उसी ख़ानदान वाले हैं.

(3)
सांस दर सांस का जतन करते.
मर न जाएं कहीं सुख़न करते.
दिल तो जुड़ता है जुड़ते-जुड़ते पर,
अव्वलन काम हैं नयन करते.
याद करने से लाख बेहतर था,
तेरी यादों का हम हवन करते.
अब तमाशा कि ये हैं रहबर वो,
जो तमाशा थे राहजन करते.
हाय वह ख़्वाब राजगद्दी के,
उम्र गुज़री ये बन-गमन करते.
दिल पसीजा न देवताओं का,
मुद्दतों हो गए भजन करते.

(4)
हमारी जान पर आई हुई है.
बड़ी ज़ालिम ये तन्हाई हुई है.
हमारे ख़्वाब पगलाए हुए हैं,
हमारी नींद बौराई हुई है.
ख़ुशी के रंग फ़ीके पड़ चुके हैं,
उदासी इस क़दर छाई हुई है.
के हम दुनिया से उकताए हुए हैं,
के दुनिया हमसे उकताई हुई है.
अज़ल के रोज़ से इक दिलरुबा ने,
बदन में आग दहकाई हुई है.
किसी को भूलने की कोशिशों में,
किसी की याद टकराई हुई है.
मोहब्बत के नशे में है ये लड़का,
वो लड़की है कि घबराई हुई है.

सुभाष पाठक 'ज़िया'

(1)

उदास दिल है परेशान ज़हन है यारा.
कहां है तू कि तुझे ढूंढता मैं आवारा.
मैं कल नदी पे गया और तेरा नाम लिया,
किनारे ख़ूब हंसे ख़ुश हुई बहुत धारा.
न तो वजूद ख़ुशी का न ग़म का है मतलब,
तुम्हारे होने न होने का खेल है सारा.
फिर उसके बाद मुझे कौन जीत पाया है,
जो एक बार मेरे यार तुझसे मैं हारा.
शजर से टूटे हुए बद-नसीब पत्तों सा,
तेरे लिए मैं फिरा हूं यहां-वहां मारा.
'ज़िया' को आपने उस वक़्त कोहनूर कहा,
समझ रहा था वो जिस वक़्त ख़ुद को बेचारा.

(2)

आज गुलशन का नज़ारा और था.
गुल का तितली को इशारा और था.
चांद को क्यूं देख कर हैरान हो,
टूटने वाला सितारा और था.
आ गए हालात के मारे उधर,
रास्ता वरना हमारा और था.
मानिए धोका हुआ है आपको,
मैं नहीं दुश्मन तुम्हारा और था.
हर किसी को यूं न शक से देखिए,
घर जलाया वो शरारा और था.

(3)
कितने ग़म कितनी वहशतों के बाद.
मुस्कुराया हूं मुद्दतों के बाद.
इक अजब सी घुटन है दिल में आज,
जिस्म में इतनी राहतों के बाद.
रास्तों पर फ़क़त मुसाफ़िर हैं,
मंज़िलें तो हैं रास्तों के बाद.
कुछ न था यार प्यार से पहले,
कुछ न होगा मुहब्बतों के बाद.
देने वाला है अस्ल में वो ही,
जो दे अपनी ज़रूरतों के बाद.
देखते हैं कि क्या असर होगा,
उस पे मेरी शिकायतों के बाद.
कश्ती- ए - ज़िंदगी किनारे लगी,
ऐ 'ज़िया' कितनी आफ़तों के बाद.

(4)
बढ़ गया है दायरा तारीकियों का.
सिलसिला अब ख़त्म है परछाइयों का.
सहमा -सहमा सा लगे है आज सूरज,
आ गया हो जैसे मौसम सर्दियों का.
हमने ही चाहा कि पानी पर चलें हम,
अब किसे इल्ज़ामदें बर्बादियों का.
मर गये अहसास दिल ही दिल में घुटकर,
ये सिला हमको मिला ख़ामोशियों का.
महफ़िलो तुमसे भी मैं इक दिन मिलूंगा,
सिलसिला टूटा अगर तन्हाइयों का.
तीरगी में राह दिखलाई चमक कर,
है बड़ा अहसान मुझ पर बिजलियों का.
तुमने आकर ही ज़िया दी है 'ज़िया' को,
वरना इक जंगल था वो तारीकियों का.

अजय अज्ञात

(1)

बेतरह पत्थर उछाले ख़ामख़्वा.
आइने सब तोड़ डाले ख़ामख़्वा.
कुछ नहीं इनमें सराबों के सिवा,
लोग टकराते पियाले ख़ामख़्वा.
एक भी मोती हमें न मिल सका,
कितने ही सागर खंगाले ख़ामख़्वा.
अपने दिल को अपने क़ाबू में रखो,
मत करो मेरे हवाले ख़ामख़्वा.
फ़ेसबुक ट्विटर पे रहते व्यस्त हैं,
हमने कैसे रोग पाले ख़ामख़्वा.
तीरगी शब में मुसल्लत है मगर,
हो रहे दिन में उजाले ख़ामख़्वा.
अपना चेहरा तो नहीं देखा कभी,
नुक़्स दर्पण में निकाले ख़ामख़्वा.
लौट कर वापिस वहीं पर आ गए,
पड़ गए पैरों में छाले ख़ामख़्वा.

(2)

क्या बात है, क्या बात है, क्या बातहै.
हर बात मेंअर्थात है, क्याबात है.
ये सूरते हालातजो तुम को मिली,
अल्लाह की सौगातहै, क्या बातहै.
चश्मे बसीरत हैबहुत रौशन तभी,
रौशन तुम्हारी ज़ात है, क्या बातहै.
तख़लीक़ में क्याअहमियत है फ़िक्रकी,
सब तुम कोमालूमात है, क्याबात है.
शेरी अनासिर कातुम्हारा तब्सिरा,
क्या बात है, क्या बात है, क्या बातहै.

(3)

कहां हूं मैं, नहीं मुझ को पता है.
जुनू ने शाइरी सर पर चढ़ा है.
जो मुद्दत से मेरे दिल में बसा है,
वो मुझ को मुझ से बेहतर जानता है.
वहीं सब अजनबी मुझ को हैं कहते,
जहां हर कोई मुझ से आशना है.
बहुत ही कश्मकश है ज़िंदगी में,
मेरा ज़ख़्मे जिगर अब भी हरा है.
मुझे मंज़ूर है किरदार मेरा,
ये जैसा भी है, अच्छा या बुरा है.

(4)

ख़ुद को बदलतेवक़्त के सांचेमें ढाल कर.
रख दे वजूदसे ज़रा 'मैं' को निकाल कर.
फ़िक्रे सुख़न मेंख़ून को रख दे जलाके तू,
दुनिया तेरी मिसालदे ऐसा कमालकर.
दे दे निजातप्यास से सहरा को एकदिन,
हैरत में डालदे कोई चश्मानिकाल कर.
इस ज़िंदगी सेजिस को मुहब्बतनहीं मिली,
रखता है अपनेसीने में ग़ुस्साउबाल कर.
मेहनत से अपनेलक्ष्य को पाने का करजतन,
किस्मत ने क्यादिया है न उसका मलालकर.
इक्कीसवीं सदी केमेरे नौजवान सुन,
तहज़ीब के शजरको तू रखना संभाल कर.
आकाश में नछेद कभी कर सकेगा तू,
जितना भी चाहेदेख ले पत्थरउछाल कर.

विकास राणा फ़िक्र

(1)

मैं अपने आपसे अपनी ख़ुशी से.
बहुत उकता गया हूं ज़िंदगी से.
है टाला आज को हर रोज़ कल पर,
कोई कल भी निकालो आज ही से.
बहुत चालाक है वो क्या तुम्हें भी,
नज़र आता है उसकी सादगी से.
मैं तुमको भूलता हूं रोज़ ऐसे,
कोई पानी निकाले ज्यूं नदी से.
बस अब थकने लगी है मेरी मिटटी,
बस अब तू बाज़ आ कूज़ागरी से.
न ही मुझको समझ में आयी है फ़िक्र,
न मैं समझा गया हूं ज़िंदगी से.

(2)

खुद जुनूं करने लगी है दुनिया.
तो मुझे भूल गयी है दुनिया.
क्या रफू और गिरेबां मेरा,
हाय! क्या करने लगी है दुनिया.
खुद को जब खूब बिगाड़ा मैंने,
तब कहीं जा के बनी है दुनिया.
मत उठा जाम यहीं रख साक़ी,
अभी तो हूं मैं अभी है दुनिया.
सर उठा अश्क़ बहाने वाले,
देख तो, डूब गयी है दुनिया.

(3)

वो सचमुच ही भूल चुका हो ऐसा भी हो सकता है.
या फिर यूं ही बोल रहा हो ऐसा भी हो सकता है.
मेरे इलावा उसके दिल में और भी कितने रहते हैं,
शायद उसका दिल ही बड़ा हो ऐसा भी हो सकता है.
हंसना गाना भी इक फ़न है मैं इस फ़न में माहिर हूं,
लेकिन मेरा दिल दुखता हो ऐसा भी हो सकता है.
फ़िक्र, न उसको तुम यूं टोको उसकी भी कुछ बात सुनो,
छोटा भाई तुमसे बड़ा हो ऐसा भी हो सकता है.

(4)

मेरे साए का तुम पीछा करोगी.
बताओ बाद मेरे क्या करोगी.
ना मिलना अब किसी शायर से फिर से,
अगर ऐसा किया अच्छा करोगी.
चलो, घर-बार, रिश्ते, धूप बारिश,
मगर ख्वाबों में तो आया करोगी.
गिले मुझसे किए थे दुनिया भर के,
किसी से तो मेरा शिकवा करोगी.
मुझे पूछोगी चाहे कोई आए,
कभी दरवाज़ा कोई वा करोगी.
मता-ए-जां, मता-ए-जां, सुनो तो,
जो मेरा दिल है, उसका क्या करोगी.
लिए जाओ ये साथ अपने ही जुमला,
मेरी खातिर बहुत रोया करोगी.
ये तारे देखकर याद आएगा फ़िक्र,
मैं बिखरूंगा मुझे यक़ज़ा करोगी.

सत्येंद्र सेंगर

कोई अपना दर्द में डूबे तो कैसे मुस्काऊं मैं?
लाख बहारें द्वार खड़ी हों लेकिन कैसे गाऊं मैं?

लोगों का क्या गर्म राख में प्रणय गीत गा लेते हैं,
अस्थि विसर्जन के पहले ही चार कौर खा लेते हैं,
डूबे हैं जो खुशी में अपनी उनको क्या समझाऊं मैं?

अब क्या हो जब पंछी उड़ के दूर हो गया डाली से
ऋतु बासंती लगते ही जब कली रूठ गई माली से
मरघट की ज्वाला के सम्मुख कैसे थाल सजाऊं मैं?

कैसे संभव रुदन जहां हो होठ वहां मुस्काते हों
सबके दुख में शामिल भी हों, झूम-झूम के गाते हों
एक वक़्त पे दोहरा चेहरा कैसे किसे दिखाऊं मैं?

आभासी दुनियां में कुछ भी भावों का आभास नहीं
खुशियों में शामिल होना क्या, रोना भी कुछ खास नहीं
सबको सतही छूने वालों को अब क्या बतलाऊं मैं?

कुछ अंदाज़ा हो पाएगा दर्द कहां कितना गहरा
मौन रुदन क्या सुन पाएगा जो ध्वनियों से भी बहरा
सब "अपने" इसमें शामिल हैं किस मंज़िल को जाऊं मैं ?

बालकवि बैरागी

झर गये पात
झर गये पात
बिसर गई टहनी
करुण कथा जग से क्या कहनी?

नव कोंपल के आते–आते,
टूट गये सब के सब नाते,
राम करे इस नव पल्लव को
पड़े नहीं यह पीड़ा सहनी,
झर गये पात बिसर गई टहनी
करुण कथा जग से क्या कहनी?

कहीं रंग है,कहीं राग है,
कहीं चंग है,कहीं फाग है,
और धूसरित पात नाथ को
टुक–टुक देखे शाख विरहनी,
झर गये पात बिसर गई टहनी
करुण कथा जग से क्या कहनी?

पवन पाश में पड़े पात ये,
जनम–मरण में रहे साथ ये,
“वृन्दावन” की श्लथ बाहों में
समा गई ऋतु की “मृगनयनी,”
झर गये पात बिसर गई टहनी
करुण कथा जग से क्या कहनी?

आतम - ज्ञान पद

राम नारायण मीणा हलधर

साधो!
कोई सगो नहीं तेरो.
मतलब के सब संगी साथी
मतलब प्रेम-घनेरो.
उजले-उजले मुखड़े जिनके
मन में बहुत अंधेरो.

धन से सारे धरम-करम हैं
धन से जगत सुनेरो.
धन से गुरुजन परिजन सगरे
धन से चेरी-चेरो.

टुकड़ों पे पलने वारे जब
खोसन लगे निवारो.
ऐसे हड़के कूकर खातिर
रखियो निकट कुतेरो.

झूठी चाहे जितनी लंबी
रतियां गहन अंधेरो.
सच को सूरज भी निकलेगो
होगो अवसि सबेरो.
साधो!
कोई सगो नहीं तेरो.

स्वस्ति पाठ

माया मृग

भीतर उमड़ती भीड़
यकायक अराजक हो उठती है
जो नहीं बना, वह टूटता है.
चरमरा कर उठ खड़ा होता है
कसमसाता आदिम सत्य.

शोर में एकमेक हो जाती है
मंत्रों और षड्यंत्रों की भाषा.
उथल-पुथल के बाद
आखिर
कुचल दी जाती हैं कोमल कामनाएं.
यह धरती प्रेम से नहीं
प्रेम के शोर से भर उठी है.
प्लुत स्वर में खींची गई सांस के बाद
अस्वस्ति का सूत्र पकड़कर
आरंभ होता है स्वस्ति पाठ.

सावधान!
श्वासों की ध्वनियां मौन हो जाएं
कोलाहल में जारी है स्वस्तिवाचन
शांति....शांति....शांति!

विनीता गुप्ता

चीं-चीं करती आती चिड़िया मेरे घर के आंगन में.
रख देती जब दाना पानी अपने घर के आंगन में.
फुदक- फुदक वे खूब नहातीं
पंखों से फिर जल को छिड़कें
सुखा पंख फिर वे उड़ जातीं
आ जाती फ़िर थोड़ा उड़ के
चुग लेती दाना वे पूरा,
मेरे घर के आंगन में.
चीं-चीं करती आती चिड़िया मेरे घर के आंगन में.

खाती बड़े चाव से कनकी ,
और बाजरा के दाने
यदि नमकीन उन्हें मिल जाए
छीन- छीन फिर लगती खाने
कभी सुबह भूल मैं जाऊं,
जोर जोर से मुझे बुलाती मेरे घर के आंगन में.
चीं-चीं करती आती चिड़िया मेरे घर के आंगन में

भाषा बोल न जानहिं "कवीन्द्र केशव"

डॉ. अवधकिशोर जड़िया

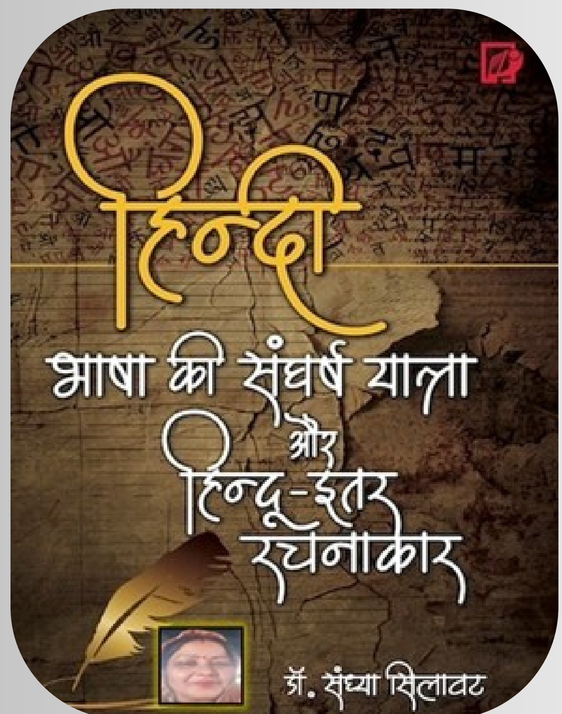

डॉ. संध्या सिलावट जी की इतिवृत्तात्मक कृति, "हिन्दी भाषा की संघर्ष यात्रा और हिंदू इतर रचनाकार" अवलोकनार्थ प्राप्त हुई. डॉ. संध्या सिलावट जी विज्ञ प्रज्ञ और साहित्य की अनेक विधाओं की गहन साधना सम्पन्न महनीय और वरेण्य साहित्यकार हैं. मूल्यवान कृति को आद्यन्त पढ़ने का अवसर, अपने आप में आनंदमार्गी यात्रा का सुखद और दुर्लभ संयोग सिद्ध हुआ. देवभाषा की दुलारी दुहिता - राजभाषा की यात्रा का उत्स, विस्तृत तथ्यपरक और कालक्रमबद्ध प्रामाणिक इतिवृत्त का सांगोपांग विवरण, विद्वानों का गहन विषय विमर्श, उनके चिंतन, मनन के मीमांसात्मक अंश तथा उपलब्ध तथ्यों की विषद -विवेचनाएं कृति में विद्यमान हैं.

कृति में कालखंड भी पूरी प्रामाणिकता से वर्णित है जब भिन्न-भिन्न धर्मों ने अपनी दृष्टि से, साहित्य संरचना में, राजकीय कार्यों में, पठन पाठन में फारसी, उर्दू- अंग्रेजी को भाषा- माध्यम बनाने के जतन किये, समस्त ऊहापोह के बीच, एक भारतीय- सनातन संस्कृति, वैदिक- परम्परा, आर्ष ग्रंथों के वे उपदेश जीवित और जाग्रत थे, जो बिना किसी जाति-धर्म का उल्लेख किये, केवल मानवमात्र के लिये प्रतिबद्ध थे, उनके संदेश - सूत्र कल्याण और उदारता के उजाले थे, कविता की भाषा, सभी धर्मों के विद्वानों के लिये, ब्रजभाषा, स्वीकार्य और चिन्हित हो चुकी थी, साहित्य, संगीत, रंगमंच और आत्मीय -आनंद की सभी मौलिक गतिविधियां, जाति-धर्म से ऊपर, रस-निष्पत्ति को समर्पित हो चुकी थीं, फ़ारसी उर्दू भाषा के रचनाकारों ने, काव्यानंद को "ब्रह्मानंद सहोदर" जान और मान लिया था.

आज भी, अनेक मुस्लिम कवियों की सुचर्चित शास्त्रीय रचनायें, साहित्य-जगत में अजर-अमर है, भाषा का सौष्ठव, शिल्प - सौंदर्य, राग बद्ध तान-तरंग के साथ भक्ति का पावन प्रवाह परात्पर ब्रह्म के अलौकिक प्रेम को समर्पित हुआ, साहित्य के उन्नत मानदंड को स्थापित करतीं अभिव्यंजनाएं, सर्वधर्म समभाव का जय घोष करती हुई रचनाएं काव्य का घनत्व और मेदनी के महत्व का प्रतिपादन करती हैं.
सभी धर्मों के उदय क्रमानुसार, हिंदी को, उनके बहुमूल्य प्रदेय का यह गहन अनुष्ठान तथा, कहीं कुछ छूट न जाये, की शर्त पर सोदाहरण काव्यांश संग्रहण, सचमुच, नैपुण्य और वैदुष्य पूर्ण सुदीर्घ और श्रम-साध्य कार्य था, जिसे डॉ. सिलावट जी ने पूरे मनोयोग और प्राणपन से आकार दिया.

ग्रंथ, आदरेय, उपादेय और सुष्ठु सराहनीय है, एक विशिष्ट कालखण्ड का संग्रहणीय प्रामाणिक दस्तावेज सिद्ध होता है. कृति और कृतिकार का आदर-अभिनंदन.

हिंदी त्रैमासिक

पहचान

देश से हम, हमसे देश

रचना आमंत्रण

अंतर्राष्ट्रीय, हिंदी त्रैमासिक ऑन लाइन पत्रिका ''पहचान'' हेतु आप भी रचनाएं भेज सकते हैं.

आलेख, समीक्षा, साक्षात्कार, शोध परक लेख, व्यंग्य, संस्मरण, यात्रा वृत्तांत, लोक साहित्य, बाल साहित्य, कविता, गीत, कहानी, लघु कथा आस्था, धरोहर, इतिहास, कला, विज्ञान, स्वास्थ्य आदि साहित्य की सभी विधाओं में रचनाओं का स्वागत है.

रचनाएं वर्ड फाइल में अपनी तस्वीर और परिचय सहित भेजें. लेख के लिए 800 से 1,000 और कहानी के लिए अधिकतम शब्द सीमा 1600 शब्द है.

यदि आप अपना खींचा कोई चित्र पत्रिका के कवर पेज या फिर तिमाही चित्र चयन के लिए विचारार्थ भेजना चाहें तो अपने परिचय के साथ चित्र के बारे में बताते हुए ई – मेल कर सकते हैं.

संपादक मंडल का निर्णय अंतिम निर्णय होगा, इसमें विवाद की गुंजाईश नहीं होगी.

editor@pehachaan.com